न घाट न घर

कोसी पुनर्वास का कहर

दिनेश कुमार मिश्र

बाढ़ मुक्ति अभियान
Freedom From Floods Campaign

बाढ़ मुक्ति अभियान
बिहार

© दिनेश कुमार मिश्र

मई, 2008

मुद्रक :
लोकवाणी प्रिंटिंग प्रेस
शशि प्लेस, नाला रोड
पटना-800 004
(बिहार)

यह पुस्तिका लेखक की मूल पुस्तक दुइ पाटन के बीच में... से उद्धृत की गई है। इसमें लिखित सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। अगर स्रोत उद्धृत करेंगे तो प्रसन्नता होगी।
इस पुस्तिका के अंग्रेजी अनुवाद के लिए कृपया बाढ़ मुक्ति अभियान से सम्पर्क करें।

टाइप सेटिंग :
ऐप्पल सॉफ्ट
सुभाष मार्केट, लंगरटोली
पटना-800004

प्रकाशक :
बाढ़ मुक्ति अभियान
6B, राजीव नगर
पटना-800 024
मो० : 9431303360 / 9431074437

(सीमित प्रसार हेतु) अपेक्षित सहयोग राशि - 20 रुपये

न घाट न घर

कोसी पुनर्वास का कहर

कोसी नदी और कोसी परियोजना

कोसी नदी बिहार की सबसे जीवंत नदी है। यह हिमालय पर्वतमाला में प्राय: 7000 मीटर की ऊँचाई से अपनी यात्रा शुरू करती है जिसका ऊपरी जलग्रहण क्षेत्र नेपाल तथा तिब्बत में पड़ता है। नेपाल में इसे सप्तकोसी के नाम से जानते हैं जो कि सात नदियों इन्द्रावती, सुनकोसी या भोट कोसी, तांबा कोसी, लिक्षु कोसी, दूध कोसी, अरुण कोसी और तामर कोसी के सम्मिलित प्रवाह से निर्मित होती है। इनमें पहली पाँच नदियों के संयोग से सुनकोसी का निर्माण होता है। छठी धारा अरुण कोसी की है और सातवीं धारा पूरब से पश्चिम की ओर बहने वाली तामर कोसी है जो कि कंचनजंघा पर्वतमाला से पानी लाती है। इस तरह सुनकोसी, अरुण कोसी तथा तामर कोसी नेपाल के धनकुट्टा जिले में त्रिवेणी नाम के स्थान पर आकर मिल जाती हैं और यहीं से इसका नाम सप्तकोसी, महाकोसी या कोसी हो जाता है।

मैदान में उतरने के बाद कोसी के पाट 6 से 10 किलोमीटर में फैल कर काफ़ी चौड़े हो जाते हैं और फिर कोसी प्राय: 50 किलोमीटर की दूरी नेपाल सीमा के अन्दर तय करती हुई नेपाल के हनुमान नगर के पास भारतीय क्षेत्र में प्रवेश करती है इसके सामने पूर्वी किनारे पर भारत का भीम नगर कस्बा पड़ता है। कोई 130 कि० मी० और बहने के बाद कोसी मानसी-सहरसा रेलवे लाइन को कोपड़िया रेलवे स्टेशन के दक्षिण में पार करती कटिहार जिले में कुरसेला के पास गंगा से संगम कर लेती है।

कोसी के कुल जल ग्रहण क्षेत्र 74,030 वर्ग कि० मी० का मात्र 11,410 वर्ग कि मी. क्षेत्र भारत में तथा बाकी 62,620 वर्ग कि. मी. नेपाल या तिब्बत में पड़ता है। इस तरह से नदी का त्रिवेणी तक का कुल जल ग्रहण क्षेत्र 59,550 वर्ग कि. मी. है। कोसी का ग्लेशियर वाला क्षेत्र केवल नेपाल/तिब्बत में अवस्थित है।

अपने धारा परिवर्तन के लिए बदनाम यह नदी आज से 150 साल पहले पूर्णियां के पूरब में बहती थी जबकि इस समय इसका निचला भाग दरभंगा जिले से होकर बहता है।

आज़ादी के बाद कोसी को नियंत्रित करने के लिए 1955 में कोसी नदी पर पूर्वी किनारे पर बीरपुर से कोपड़िया तक 125 किलोमीटर लम्बा तथा पश्चिमी किनारे पर नेपाल में भारदह से सहरसा में घोंघेपुर तक 126 किलोमीटर लम्बा तटबन्ध बनाने का काम शुरू

हुआ जो कि लगभग 1963-64 तक पूरा कर लिया गया। बीरपुर में 1963 में एक बराज का निर्माण कर के पूर्वी कोसी मुख्य नहर बनाई गई जिससे 7.12 लाख हेक्टेयर क्षेत्र पर सिंचाई का लक्ष्य रखा गया था। 1957 में पहली बार पश्चिमी कोसी नहर का शिलान्यास किया गया जिसके पूरा होने के बाद 3.25 लाख हेक्टेयर पर सिंचाई होनी थी। इस नहर पर अभी (2008) काम चल रहा है। नदी पर तटबन्धों के निर्माण के कारण इन दोनों दीवारों के बीच फिलहाल चार जिलों के 13 प्रखण्डों के 380 गाँव फंस गये हैं। इन गाँवों के पुनर्वास कार्यक्रम पर प्रश्न चिह्न लगे हुये हैं और इस पुस्तिका में हम इस पूरे मसले को आम लोगों तक ले जाने की कोशिश कर रहे हैं।

1. पृष्ठभूमि

मार्च 1959 में बिहार विधान सभा में बिहार एप्रोप्रिएशन बिल पर बहस चल रही थी। कोसी तटबन्ध इस समय तक लगभग बन कर तैयार हो चुके थे। रसिक लाल यादव ने 20 मार्च की बहस में तटबन्धों पर एक बड़ी तीखी टिप्पणी की थी। उन्होंने कहा कि, "...कोशी नदी को बांध दिया। इसके बीच से पहले लोग निकल सकते थे लेकिन अब घेर दिया है जिससे वे निकल नहीं सकेंगे और रेवेन्यू डिपार्टमेन्ट (राजस्व विभाग) की हालत यह है कि सरकार के सरकिल अफ़सर लोगों को खदेड़-खदेड़ कर मालगुज़ारी वसूल करते हैं जबकि उनका घर पानी में है। वे ऐसे लोगों को भी खदेड़-खदेड़ कर मालगुज़ारी वसूलते हैं जो केवल ककड़ी पैदा करके अपना जीवन बसर करते हैं। जो नदी के बाहर हैं उनको कहा जाता है कि खेती करने के लिए बांध के बीच में जायें। लेकिन जब वे खेती करने के लिए जाते हैं तो घटवार लोग उन्हें खदेड़ कर घाट वसूल लेते हैं। कोशी योजना उनकी रक्षा के लिए बनाई गई थी न कि उनको खदेड़ने के लिए।"

रसिक लाल यादव ने सरकार पर कोसी परियोजना में पुनर्वास के नाम पर हुई बदइन्तज़ामी की जो बात उठाई थी उसके बाद से अब तक 49 वर्षों में कुछ भी नहीं बदला है सिवाय इसके कि उन लोगों को जिनको कोसी तटबन्धों के बाहर पुनर्वास मिला था उनमें से अधिकांश अब अपने गाँवों को, तटबन्धों के अन्दर वापस चले गये हैं। कोसी पर तटबन्धों के निर्माण के फलस्वरूप दोनों तटबन्धों के बीच पहली खेप में 304 गाँवों के 1,92,000 (1951 जनगणना) लोग फंस गये थे जिनका पुनर्वास जरूरी हो गया था। यह परिस्थिति उस समय की है जब पूर्वी तटबन्ध का निर्माण भीमनगर से महिषी तक और पश्चिमी तटबन्ध का निर्माण भारदह से भंथी तक हुआ था। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि कोसी का पूर्वी तटबन्ध बाद में महिषी से कोपड़िया तक और पश्चिमी तटबन्ध भंथी से घोंघेपुर तक बढ़ा दिया गया। फ़िलहाल आधिकारिक तौर पर यह विश्वसनीय सूचना कहीं भी आम जनता के लिए उपलब्ध नहीं है कि कोसी तटबन्धों के बीच कितने गाँव हैं और वहाँ रहने वालों

की जनसंख्या कितनी है। सुपौल में कोसी योजना का पुनर्वास का दफ़्तर जरूर है मगर वहाँ भी सूचनाये व्यवस्थित रूप से उपलब्ध नहीं हैं। विधान सभा में भी इस विषय पर प्रश्न हुये हैं मगर 18 दिसम्बर 1958 को जो 304 गाँवों की सूची सदन में रखी गई थी (तारांकित प्रश्न संख्या 98 का उत्तर) वह भी अपूर्ण और भ्रामक है। इस सूची में ऐसे गाँव भी शामिल हैं जो पूरी तरह तटबन्धों से बाहर हैं। एक बार 1992 में बिहार सरकार द्वारा सहरसा/मधुबनी और दरभंगा के जिलाधीशों से कोसी तटबन्धों के बीच बसे गाँवों की सूची मांगी गई थी, उसमें भी अशुद्धियाँ हैं। सुपौल के पुनर्वास कार्यालय से जो तटबन्धों के बीच फंसे गाँवों की सूची हमें उपलब्ध हो सकी उसमें ऐसे गाँवों की संख्या केवल 285 बताई गई है। इस तरह से इन गाँवों सम्बन्धी जितने स्रोत हैं, उतनी ही जैसी-तैसी सूचनाएँ भी उपलब्ध हैं। इस अध्याय में हम अन्यत्र इन गाँवों की सूची और जनसंख्या देने का प्रयास कर रहे हैं जो कि प्रभावित प्रखण्डों द्वारा उपलब्ध कराये गये नक्शों, चुनाव कार्यालयों के नक्शों, 2001 की जन-गणना रिपोर्ट तथा उपर्युक्त दस्तावेजों की सूचनाओं पर आधारित हैं। हम ने जहाँ तक संभव हो सका है इस सूची का क्षेत्र के स्तर पर सत्यापन किया है और यह उम्मीद करते हैं कि इसमें कोई त्रुटि नहीं रहनी चाहिये।

अनौपचारिक रूप से कहा जाता है कि तटबन्धों के बीच कोई आठ लाख लोग रहते होंगे। इन गाँवों से होकर कोसी का सारा पानी आजकल बहता है। जिन लोगों ने कोसी के तटबन्धों के निर्माण और समाज के व्यापक हितों के लिए अपने हितों की कुर्बानी दे दी, उनका हाल-चाल पूछने की भी फ़ुर्सत अब किसी के पास नहीं है।

यद्यपि कोसी पर बराहक्षेत्र बांध बनाने का पहला प्रस्ताव 1937 में पटना बाढ़ सम्मेलन में किया गया था पर वास्तव में कोसी पर हाई डैम बनाने की नीयत से हुकूमत की नजर पहली बार 1946 में पड़ी थी जब तत्कालीन वाइसराय लॉड वैवेल दरभंगा महाराजा की दावत पर कोसी के इलाके में आये थे। उन्हीं की पहल पर कोसी को नियंत्रित करने के लिए सेन्ट्रल वाटर, इरिगेशन और नेविगेशन कमीशन (CWINC) को इस काम के लिए एक योजना बनाने का दायित्व दिया गया। तत्कालीन केन्द्रीय योजना मंत्री सी० एच० भाभा के निर्मली के भाषण (1947) की यही पृष्ठ भूमि थी। कोसी नदी पर किसी प्रस्तावित बांध से होने वाले विस्थापन और पुनर्वास के संदर्भ में संभवत: पहला बयान राय बहादुर अयोध्या नाथ खोसला, अध्यक्ष, सेन्ट्रल बोर्ड ऑफ इरिगेशन ऐण्ड पॉवर ने दिल्ली में दिया था (1947) कि, "...यह बेहतर होगा कि फ़ायदे और कुर्बानियों को बराबर-बराबर बांटा जाय। ऐसे इलाके जहाँ पुनर्वास के लिए ज़मीन उपलब्ध नहीं है, वहाँ इसे उन लोगों से हासिल किया जाय जिनको योजना से सिंचाई का फ़ायदा होने वाला है। ऐसे लोगों से यह कहा जाय कि वह डूब क्षेत्र और कुल सिंचित और कुल सुरक्षित होने वाली ज़मीन के अनुपात में अपनी ज़मीन का हिस्सा विस्थापितों को दें। बस इतना ध्यान जरूर रखना चाहिये कि ऐसा करने

से कोई भी जोत इतनी छोटी न हो जाये कि उससे कोई फ़ायदा ही न हो। पुनर्वास और क्षतिपूर्ति का मसला दूरदृष्टि और सहानुभूति के आधार पर तय होना चाहिये। जहाँ तक मुमकिन हो सके पुनर्वास में ज़मीन के बदले ज़मीन दी जाये। पूरी तरह डूब जाने वाले इलाकों के स्थान पर नई जगहों पर बसने वाले लोगों के लिए आदर्श सुविधाओं सहित आदर्श गाँव बसाये जायें।"[1]

यह अयोध्या नाथ खोसला की ओर से एक इंजीनियर की हैसियत से दिया हुआ उस समय का बयान था जब बातचीत बराहक्षेत्र बांध के बारे में चल रही थी और कोसी तटबन्ध किसी गिनती में ही नहीं थे। यह आज़ाद भारत की उस समय की सभी नदी घाटी योजनाओं के सन्दर्भ में दिया गया बयान था। जहाँ तक बराहक्षेत्र बांध का सवाल है उसका तो सारा विस्थापन और पुनर्वास नेपाल में होने वाला था अत: वह स्थानीय चिन्ता का विषय नहीं था।

कोसी तटबन्धों के बीच फंसने वालों के पुनर्वास का जहाँ तक सवाल था, उसके लिए कंवर सेन और डॉ० के० एल० राव (1954) क्रमश: केन्द्रीय जल तथा शक्ति आयोग के अध्यक्ष और उसके निदेशक को अध्ययन के लिए चीन की ह्वांग हो नदी के तटबन्धों के बीच रहने वाले लोगों की दशा का जानने के लिए भेजा गया था। इन विद्वानों ने चीन की ह्वांग हो नदी घाटी परियोजना में मिलने वाली पुनर्वास योजनाओं का हवाला देते हुये कहा था कि, "...वहाँ 2,40,000 लोग ऐसे थे जो उस इलाके में फंसने वाले थे जो कि भविष्य में डूब जाता। इनमें से 80,000 लोगों को घाटी के बाहर पुनर्वासित कर दिया गया। बाकी बचे 1,60,000 लोग घाटी में ही रहेंगे और वहीं रह कर खेती-बाड़ी करेंगे। और क्योंकि नदी घाटी वाले क्षेत्र के डूबने की सम्भावना 10 से 15 वर्ष के अन्तर पर ही बनती है, इसलिए इन लोगों को जो भी नुकसान या परेशानी होगी वह इतने लम्बे समय के बाद ही होगी। जब भी उनकी फ़सलों को वास्तव में कोई नुकसान होगा तब उनकी लगान माफ़ कर दी जायेगी और क्षतिपूर्ति कर दी जायेगी।"[2]

डॉ० के० एल० राव और कंवर सेन के इस सुझाव ने आने वाले समय में तटबन्धों के निर्माण के कारण होने वाली समस्याओं के समाधान के रास्ते खोल दिये। वह लोग जोकि कोसी तटबन्धों के बीच फंसने वाले थे वह तो वैसे भी परेशान थे क्योंकि उनका तो भविष्य ही दांव पर लग गया था। इसके बाद जो श्री ललित नारायण मिश्र ने 2 दिसम्बर 1954 को पटना में एक बयान में श्रोताओं को बताया कि पूना की हॉइड्रॉलिक रिसर्च लैबोरेटरी में अनुसन्धान में यह पाया गया है कि कोसी नदी पर तटबन्ध बन जाने के बाद भी उसके बाढ़ के स्तर में केवल चार इंच की बढ़ोतरी होगी और इस तरह से पुनर्वास का मसला कोई गंभीर नहीं है। बाद में प्रयोगशाला ने ललित बाबू की इस बात का अनुमोदन भी कर दिया।

2. कोसी परियोजना और दीर्घ-कालिक पुनर्वास

1934 के बिहार भूकम्प के बाद उत्तर बिहार की टोपोग्राफी में बहुत से परिवर्तन आये जिससे बाढ़ों का स्वरूप भी बदला। कोसी की बाढ़ों के निराकरण के लिए एक समय (1937 में) बराहक्षेत्र बांध की बात उठी मगर सारा समाधान आख़िरकार 1953 में तटबन्धों पर जाकर अटक गया। सबसे अहम बात यह है कि तत्कालीन नेतागण लोगों को यह समझा पाने में कामयाब हो गये कि तटबन्धों का उनके बीच रहने वाली आबादी पर कोई ख़ास असर नहीं पड़ेगा। पूना की प्रयोगशाला ने जनता को गुमराह करने के इस काम में नेताओं की बड़ी मदद की थी।

शुरू-शुरू में तो कोसी परियोजना में दीर्घकालिक पुनर्वास कोई मुद्दा ही नहीं था। इसके बाद परियोजना पर काम शुरू होने के बाद इक्का-दुक्का आवाजें सुनाई पड़ती थीं मगर उन सब का निचोड़ यही था कि तटबन्धों के अन्दर फंसने वालों को 'बाह बहादुर ! शाबास, बहादुर ! लगै-बहादुर !' की तर्ज़ पर अपनी ज़मीन-जायदाद को समाज और देश के व्यापक हितों के नाम पर न्यौछावर करने के लिए प्रोत्साहित किया जाय। कोसी क्षेत्र के बाढ़ पीड़ितों को यह बार-बार बताने की कोशिश की गई कि यह योजना कोसी नदी की भयंकर बाढ़ से जन-साधारण के बचाव की योजना है तथा यह योजना कोसी के अभिशाप को वरदान में बदलने की योजना है या फिर यह एक बड़े ख़र्चे पर बनाई जाने वाली महान योजना है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए समाज के व्यापक हित में कुछ लोगों को गाँव और घर छोड़ने पड़ सकते हैं और उनके लिए यह बेहतर होगा कि वह लोग यह काम ख़ुशी-ख़ुशी करें। कोसी प्रोजेक्ट के प्रशासक टी. पी. सिंह का कहना था कि, "...जितनी जल्दी मुमकिन हो सकेगा, तटबन्धों के बीच फंसने वाले लोगों को उनकी ज़मीन का मुआवज़ा मिल जायेगा और इसके लिए उन्हें भटकना नहीं पड़ेगा। न तो तटबन्ध किसी गाँव के बीच से होकर गुज़ारा जायेगा कि उसके दो फाँक हो जायें और न ही तटबन्धों की वज़ह से कोई घर उजड़ेगा। अगर कोई घर कहीं उजड़ता भी है तो इस समस्या का तुरन्त सामाधान किया जायेगा और कर्मचारियों की भी कमी आड़े नहीं आयेगी।"[3] उधर कोसी प्रोजेक्ट के जन-संपर्क अधिकारी, मही नारायण झा का कहना था कि, "...यद्यपि तटबन्धों के बीच रहने वाले लोगों के बारे में अभी तक कोई निर्णय नहीं लिया गया है मगर पूना प्रयोगशाला में किये गये परीक्षणों के उत्साहजनक परिणाम मिले हैं और ऐसा लगता है कि उन लोगों को कोई विशेष कठिनाई नहीं होगी।"[4]

कोसी परियोजना में तटबन्धों के बीच फंसने वाले लोगों के मुआवज़े, पुनर्वास और योग्य-क्षेम का प्रश्न लम्बे समय तक अनुत्तरित रहा। तटबन्धों पर काम शुरू होने के बावजूद किसी को भी यह पता नहीं था कि इन तटबन्ध पीड़ितों का भविष्य क्या है?

2 मार्च 1956 को पटना में कोसी कन्ट्रोल बोर्ड की एक बैठक हुई और ऐसी

खबर थी कि इस मीटिंग में केन्द्रीय जल एवं विद्युत आयोग के अधिकारियों ने तटबन्ध पीड़ितों को दिये जाने वाले मुआवज़े का विरोध किया था। मगर तत्कालीन सिंचाई मंत्री राम चरित्तर सिंह तथा कोसी प्रोजेक्ट के प्रशासक त्रिवेणी प्रसाद सिंह ने इन अधिकारियों से मुआवज़े की बात मनवा ली जिसका बाद में मुख्यमंत्री ने भी अनुमोदन कर दिया। उधर केन्द्रीय जल और विद्युत आयोग के अध्यक्ष का मानना था कि अगर एक परियोजना में मुआवज़े का भुगतान कर दिया गया तो इससे एक ग़लत परम्परा की शुरुआत होगी और भविष्य में बनने वाली सारी परियोजनाओं में मुआवज़े का भुगतान करना पड़ेगा।[5]

3. ललित नारायण मिश्र ने पुनर्वास की मांग रखी

भारत सेवक समाज के कार्यकर्ताओं की एक मीटिंग घोघरडीहा में 11 जून 1956 को हुई जिसमें प्रस्ताव किया गया कि, "...यह सम्मेलन भारत तथा बिहार सरकार का ध्यान कोशी के दोनों तटबन्धों के बीच नदी की ओर पड़ने वाले लोगों की दु:खद स्थिति की ओर आकृष्ट करता है। कोशी के पश्चिमी तटबन्ध के अन्तर्गत करहारा, लौकही, धनछिया, बगेवा, अलोला, हटनी, निघमा, शत्रुपट्टी, धाबघाट, सहरवा, नौआबाखर (फुलपरास थाना) और बिशुनपुर, तरडीहा, सिकरिया, महिसाम और मटरस गाँवों की दु:स्थिति के आधार पर जो कुछ अनुभव हुआ है उससे पता चलता है कि तटबन्ध से एक दो मील तक की दूरी पर पड़ने वाले लोगों की तटबन्ध के परिणाम स्वरूप दु:स्थिति अनिवार्य है। ऐसे क्षेत्र समय से पहले जलमग्न होंगे और उनकी फ़सलें बरबाद हो जायेंगी, उनका भविष्य भी अंधकारमय किया गया है। उन्हें कोशी से छुटकारा पाने की कोई आशा नहीं है।"[6]

सभा ने यह भी मांग की कि जहाँ तक सम्भव हो सके सारे गाँवों की रिंग बांध बना कर रक्षा की जाये, बाढ़ पीड़ितों का पुनर्वास किया जाय, इनके लिए रोजगार के साधन मुहय्या करने का इंतजाम किया जाय, और इन लोगों की लगान और कर्ज़ों की माफ़ी के लिए प्रमाणपत्र जारी किये जायें।

मज़े की बात थी कि इस मांग पत्र का प्रस्ताव करने वाले ललित नारायण मिश्र ही थे जिन्होंने खुद 2 दिसम्बर 1954 को सार्वजनिक रूप से कहा था कि पुनर्वास का मसला कोई खास गंभीर नहीं है क्योंकि तटबन्धों के अन्दर बाढ़ का लेवल केवल दस सेन्टीमीटर (चार इंच) के आस-पास ही बढ़ेगा। इस सभा में प्रस्ताव का समर्थन करने वालों में रसिक लाल यादव भी थे। हालत यह थी कि एक ओर लोग पुनर्वास की गुहार लगा रहे थे और दूसरी ओर अधिकारी बार-बार पूना प्रयोगशाला के विस्तृत नतीजों का इन्तज़ार करने का वास्ता दे रहे थे। पूना प्रयोगशाला की रिपोर्ट ने अपने आप को मख़ौल का सामान 1956 की बाढ़ के समय ही बना लिया था जब कोसी की बाढ़ ने न सिर्फ तटबन्ध के बीच जनता का जीना दूभर कर दिया था वरन् उसने तटबन्धों के बाहर भी

भारी तबाही मचाई थी, यह किसी के दिमाग़ में घुसता ही नहीं था। सवाल इस बात का है कि 1954 में ही ललित नारायण मिश्र जब तटबन्धों के बीच कोसी के लेवेल के चार इंच ही बढ़ने की भविष्यवाणी कर चुके थे तो पूना की प्रयोगशाला के निर्णय की प्रतीक्षा किस बात की हो रही थी?

टी. पी. सिंह, प्रशासक-कोसी प्रोजेक्ट, ने 11 जून 1956 को प्रेस से बातचीत करते हुये कहा कि तटबन्धों के निर्माण के कारण सहरसा जिले में बहुत सी ज़मीन अब बाढ़ से सुरक्षित हो गई है। वह इलाका जो पहले कभी समुद्र की तरह दिखाई पड़ता था अब वहाँ लहलहाते खेत हैं। लेकिन उन्होंने कहा कि जो लोग तटबन्धों के बीच फंस गये हैं, उन्हें बाढ़ से बचा पाना नामुमकिन है और उन्हें संरक्षित स्थानों पर पहुँचाने की कोशिशें जारी हैं।[7]

4. वह रिलीफ़ कहाँ है जिसका वायदा किया गया था ?

जहाँ तटबन्धों के बीच फंसे लोगों के प्रति सरकार का यह रुख़ था वहीं तटबन्धों के बीच की ज़मीनी हक़ीक़त एकदम अलग थी। जानकी नन्दन सिंह ने बिहार विधान सभा को बताया कि, '...मैंने नाव पर उन इलाकों का दौरा किया और जो दर्दनाक हालत वहाँ की देखी उसे देख कर मुझे विश्वास हुआ कि पाषाण से पाषाण हृदय वाला आदमी भी दहल सकता है। पेशाब-पाख़ाना तक जाने के लिए कहीं भी सूखी ज़मीन नहीं है और न कोई फ़सल ही वहाँ बची है, यहाँ तक कि लोग मृत्यु के मुंह में जाने के लिए तैयार हैं। रिलीफ़ देकर किसी तरह उनकी मृत्यु को रोका जा सकता था तो कई दिनों से यह भी बन्द कर दिया गया है। अब आप समझ सकते हैं कि उनकी क्या हालत हो रही होगी। सहरसा और दरभंगा के लोगों ने मंत्री के पास दरख़्वास्त दी लेकिन वह भी कहते हैं कि रिलीफ़ के लिए अब पैसे नहीं रह गये हैं। **आप कहते हैं कि यह वेलफेयर स्टेट है और दूसरी तरफ हज़ारों की तादाद में लोग भूख से तड़प रहे हैं और मृत्यु के मुंह में जाने के लिए तैयार हैं। अफ़सोस कि ऐसे लोगों के लिए आप कहते हैं कि पैसे नहीं है तो फिर सरकार किस लिए है?"**[8]

5. पुनर्वास के लिए आन्दोलन

जैसे-जैसे लोगों पर तटबन्धों का प्रभाव जाहिर होने लगा वैसे-वैसे प्रभावित लोगों के बीच असंतोष भी सुलग रहा था। सहरसा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के अध्यक्ष भूषण गुप्ता की अध्यक्षता में 1956 के मध्य तक एक जन-आन्दोलन की शुरुआत हो चुकी थी। उन्होंने उन लोगों की तरफ़ से आवाज उठाई जो तटबन्धों के बीच में फंसने वाले थे और जिनकी ज़मीन तटबन्धों के हत्थे चढ़ने वाली थी और अब यह लोग हमेशा-हमेशा के लिए तटबन्धों के कारण कोसी की समग्र धारा के सामने पड़ने वाले थे। "...गुप्ता का मानना था कि

नेताओं ने लोगों को आश्वासन दिया था कि उन्हें अगर किसी भी किस्म का ख़तरा होगा तो उन्हें घर के बदले घर और ज़मीन के बदले ज़मीन दे दी जायेगी। अब यह शब्द नेता बड़ा भ्रामक है। उस समय तो कोई भी नेता कुछ भी भाषण दे दिया करता था। इनमें से कइयों को तो इस तरह का बयान देने का कोई हक़ भी नहीं था। जिनको यह अधिकार प्राप्त था वह भी यह जानते थे कि उनकी बातों का कोई मतलब नहीं है और उनको यह तो जरूर मालूम रहा होगा कि ऐसे आश्वासनों का भी कोई मतलब नहीं होता। श्री गुप्ता के अनुसार कई अधिकारियों ने भी आश्वासन दिया था कि गड़बड़ कुछ भी नहीं होगा। यह एकदम अलग सवाल है। पुनर्वास के बारे में किसी भी आश्वासन, भले ही उसे लागू करने की कोई भी नीयत न रही हो, की कुछ कीमत हो सकती है मगर जिस किसी ने भी यह कहा हो कि गड़बड़ कुछ नहीं होगा वह सच तो नहीं ही बोल रहा था।"[9]

यहाँ एक गंभीर सवाल खड़ा होता है। जनता को तो एक बार मान लें कि वह अनपढ़ है, गँवार है उसे इंजीनियरिंग की समझ नहीं है, वह प्रोजेक्ट के फ़ायदे को नहीं समझ सकती मगर क्या हमारे नेताओं को भी यह पता नहीं था कि जब कोसी पर बराज और तटबन्ध बन जायेगा तब नदी का सारा पानी तटबन्धों के बीच से होकर ही गुज़रेगा? क्या उनको भी नहीं पता था कि बाढ़ की वह समस्या जो पूरे कोसी क्षेत्र को भोगनी पड़ती थी वह अब सघन रूप से इन तटबन्ध के मारों के हिस्से में आ जायगी? क्या हमारे विशेषज्ञों को वह सब दिखाई नहीं पड़ा जो ह्वांग हो नदी में चल रहा था जिसे वह ख़ुद देख कर आये थे? क्या उनको नहीं पता लग पाया कि ह्वांग हो तटबन्धों के कारण चीनी लोगों की नाक में दम था और उन्होंने इन विशेषज्ञों के चीन जाने के पहले ही रूसी इंजिनियरों को इस समस्या ने निबटने के लिए अपने यहाँ बुला रखा था? क्या पूना प्रयोगशाला के इंजीनियरों को नहीं पता था कि कोसी तटबन्धों के बीच ज़मीन का ढाल पश्चिम की तरफ़ था और नदी का पानी औसत के सिद्धान्त को नहीं मानेगा और केवल चार इंच की समान गहराई से नहीं बहेगा? क्या भारत सेवक समाज के पुरोधाओं को, जिन्हें 'जड़ता के पहाड़ों को हिला देने और तोड़ देने' का मैण्डेट हासिल था, यह नहीं मालूम था कि तटबन्ध पीड़ितों को उनके गाँवों से हटा कर दूसरी जगह बसाना पड़ेगा?

इन सभी सवालों का एक ही जवाब है कि यह सारी बातें सबको पता थीं। ब्रज नन्दन 'आजाद' (1956) का कहना था कि, "...शुरू-शुरू में तो इस मामले को इसलिए दबा कर रखा गया कि अगर आवाज़ें उठेंगी तो परियोजना की लागत ही बढ़ जाने का अंदेशा था जिससे उसके ख़ारिज़ हो जाने का डर था। अब वह ख़तरा टल गया है। अब सम्बद्ध अधिकारियों को यह चाहिये कि वह लोगों को सुरक्षित स्थानों पर ले जायें।"10 आज़ाद के विचारों को बल मिला विधायक एम. एम. प्रसाद (1956) की बात से जिन्होंने कहा कि, "...बिहार का यह हक़ बनता है कि वह बिहार सरकार से पूछे कि क्या उसे

अभी भी इस बात का एहसास है कि उसने और केन्द्रीय सरकार ने जनता के भाग्य और भविष्य के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वाह नहीं किया और सच यह है कि कोताही बरती गई है ...इनकी सही संख्या 1.91 लाख है, जिनके 45,291 घर हैं जिनमें से 2,528 पक्के हैं, जिनके खेती का रकबा 46,331 हेक्टेयर है और इसमें से आधे पर धान पैदा होता है। .... केन्द्रीय जल, विद्युत और सिंचाई आयोग के अध्यक्ष इस बात को स्वीकार करते हैं कि 2 लाख क्यूसेक (5,670 क्यूमेक) की बाढ़ पर ही नदी अपने किनारों को तोड़ कर बह निकलती है... और जब तक पानी के इस फैलाव से राहत नहीं मिलती है. **.. तब तक पानी का यह फैलाव जान-माल के लिए ख़तरा पैदा करेगा और असह्य परिस्थितियाँ पैदा करेगा। ...अगर लोगों को पूना प्रयोगशाला में होने वाले प्रयोगों की मेहरबानियों पर छोड़ देना है तो उनका भविष्य क्या होगा-यह सभी जानते हैं।"**11

पूना की जिस प्रयोगशाला की उन दिनों इतनी तूती बोलती थी उस प्रयोगशाला की वैज्ञानिक खोज-बीन के बारे में टी. पी. सिंह (1957) की एक टिप्पणी है। उनका कहना है कि, "...मॉडल टेस्ट में जो सिल्ट की परिस्थिति बनती है, उसे हू-ब-हू उतारा नहीं जा सकता। यही कारण है कि तटबन्धों के बीच बहुत से गाँवों के बारे में अप्रत्याशित रूप से हालात बदतर दिखाई पड़ते हैं। करीब 20 गाँव ऐसे हैं जिनके बारे में मॉडल टेस्ट में पाया गया था कि 9 लाख क्यूसेक के प्रवाह पर भी उनको कोई नुकसान नहीं पहुँचेगा वह 1956 की बाढ़ में, जबकि केवल 1.90 लाख क्यूसेक पानी ही आया था, बुरी तरह डूबने उतराने लगे। इस साल 2,66,000 क्यूसेक के प्रवाह पर ही करीब 24 गाँवों में ज़िन्दगी दुश्वार हो गई तटबन्धों से लगे कुछ गाँव तो कट भी गये हैं। तटबन्धों पर नदी के हमले की जगहें भी हर साल बदलती रहेंगी। इस पृष्ठभूमि में अगर जनता यह मांग करती है कि उनके बचाव के लिए कुछ किया जाना चाहिये तो इससे इन्कार नहीं किया जा सकता।"12

बिहार विधान सभा का सदस्य होने के नाते मुरली मनोहर प्रसाद ने यह मसला सदन में भी उठाया और कहा कि, "... और मैं सिंचाई मंत्री का ध्यान कोसी समस्या की ओर ले जाना चाहूँगा जिससे लगभग डेढ़ लाख लोग परेशान हैं और यह समस्या पूना की शोध प्रयोगशाला में हल नहीं की जा सकती। कोसी एक धारा बदलने वाली नदी है और इसमें आने वाला अधिक प्रवाह लोगों के लिए काफ़ी दिक़्क़तें पैदा करता है। इस समस्या का सामाधान जितनी जल्दी खोज लिया जाय उतना ही लोगों और सरकार के हक़ में बेहतर होगा। आप लोगों की तमाम कोशिशों के बावजूद समस्या जस की तस बनी हुई है।"13

आर्यावर्त्त के सम्पादक के नाम लिखे गये एक पत्र में कोसी क्षेत्र के नेताओं, लहटन चौधरी, कामता प्रसाद गुप्ता, भोला सरदार और खूब लाल महतो (1956) ने कहा कि, "...दोनों तटबन्धों के बीच पड़ने वाले लाखों लोग अपने भाग्य पर रोते हैं और उनमें अजीब भय उत्पन्न हो गया है। किन्तु इतना ही नहीं हुआ। सरकार ने भी उनके भय और आशंकाओं

को घटाने के बदले अत्यधिक बढ़ा दिया। सरकारी अधिकारियों की ओर से कोशी क्षेत्र के लोगों को सूचना दी गई कि उनके ऊपर ख़तरा है और उन्हें किसी क्षण तटबन्ध से बाहर आने के लिए तैयार रहना चाहिये। फलस्वरूप लोगों ने अपनी ज़मीन को, जिस ज़मीन में कुछ उपज हो भी सकती है, परती छोड़ दिया ...एकाएक रिलीफ़ कार्य को बन्द कर दिया। ...बांध के बाहर के अनेकों गाँव वर्षा के पानी से अनवरत डूबे रहते हैं और उनकी हालत और भी गई बीती है।"[14]

अपने समय के इन स्वनामधन्य नेताओं को तटबन्धों के प्रभाव की जानकारी नहीं थीं, यह अपने आप में जितने बड़े आश्चर्य की बात है उतनी ही अविश्वसनीय भी है। एक नेता होने के नाते उन्हें इन सारे पक्षों की जानकारी होनी चाहिये थी। इससे भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि यह सारे लोग सारी बातों को समझते-बूझते हुये भी हवा का रुख़ देख का ख़ामोश रह गये हों। क्यों ऐसी परिस्थितियाँ पैदा की गईं कि कोसी परियोजना के निर्माण के फलस्वरूप अच्छी ख़ासी तादाद में लोगों को अपनी किस्मत पर रोना पड़े ? जब लोग अपनी किस्मत ठोंक रहे थे तो इलाके के नेता और इंजीनियर किस तरह से आश्वासनों की झड़ी लगाते थे उसकी एक झलक हमने पहले के अध्यायों में देख रखी है।

6. लहटन चौधरी ने भी पुनर्वास की बात उठाई

1957 के आम चुनाव का गुबार जब ठंडा पड़ा तब नेताओं में कोसी तटबन्ध के पीड़ितों के बीच थोड़ी सहानुभूति जगी। इन लोगों की पीड़ा को देखते हुये लहटन चौधरी (1957) ने बहुत सी अन्य बातों के साथ इस बात का सुझाव दिया कि,

"(1) अविलम्ब सरकार को घोषणा द्वारा इस बात को स्पष्ट कर देना चाहिये कि सारी जवाबदेही उसकी होगी और वह समुचित प्रबन्ध करेगी।

(2) पर्याप्त संख्या में सर्वे पार्टियों में जाकर हर परिवार के निवास एवं खेती बारी आदि के सम्बन्ध में पूरा आंकड़ा तैयार करवा लिया जाना चाहिये ताकि आवश्यकता पड़ने पर उन्हें हर तरह से उचित मुआवज़ा दिया जा सके। यह कार्य जून के पहले ही समाप्त कर लेना चाहिये नहीं तो बाढ़ आ जाने पर यह असम्भव हो जायेगा और हर बाढ़ के बाद ज़मीन की हैसियत बदल जाने की संभावना रहती है।

(3) इस बात का पता लगाना चाहिये कि किन-किन गाँवों में हालत तुरन्त बिगड़ सकती है। ऐसे गाँवों के पुनर्वास का प्रबन्ध बाढ़ के पहले ही हो जाना चाहिये तथा लोगों को इसकी सूचना दे दी जानी चाहिये।

(4) जो लोग निकलना नहीं चाहें अथवा जिनका निकलना सरकार जरूरी नहीं समझती, ऐसे मध्यवर्ती लोगों के ऊपर के सरकारी कर्ज़, मालगुज़ारी, चौकीदारी टैक्स आदि में आवश्यक छूट देने एवं बाढ़ के वक्त समुचित सहायता पहुँचाने के लिए एक अलग अधिकारी की नियुक्ति होनी चाहिये ताकि इन कामों में अनावश्यक विलम्ब न होने पाये।"[15]

7. अपनी सुविधा के अनुसार सरकार ने पुनर्वास की मांग स्वीकार की

जुलाई, 1957 आते-आते पानी चारों तरफ था, तटबन्ध के अन्दर भी और तटबन्ध के बाहर भी। पानी तटबन्धों के अन्दर इसलिए था कि अब वही नदी का रास्ता था और यह बात अगर एक अंधे को भी बताई जाये तो वह भी अनुभव कर सकता था कि नदी के दोनों ओर तटबन्ध बन जाने पर नदी का पानी उनके बीच में ही रहेगा और वहीं फैलेगा। पानी तटबन्धों के बाहर इसलिए था कि बाहर से आकर कोसी से मिलने वाली दूसरी छोटी बड़ी नदियों के मुहाने तटबन्धों के बनने की वज़ह से बन्द हो गये थे। इतना समझने के लिए किसी का इंजिनियर होना जरूरी नहीं है। कोई भी औसत बुद्धि का आदमी यह समझ और समझा सकता है। मगर हमारे नतोओं और इंजीनियरों के न तो आंख थी और न बुद्धि, जिससे वह भविष्य में होने वाले घटनाक्रम का अंदाज़ा भी कर सकें। **सबसे बुरी बात यह थी कि इन लोगों ने तटबन्ध पीड़ितों के साथ एक भद्दा मज़ाक किया-कभी पूना प्रयोगशाला के नाम पर तो कभी झूठे वायदों की बुनियाद पर। यह वह लोग थे जिनमें कुछ ने तो गीता और कुरान पर हाथ रख कर जनता की सेवा करने की क़समें तक खाई थीं और कुछ के सामने उनके इंजीनियरिंग के पवित्र पेशे के आदर्श थे जिनकी तुलना भगीरथ और विश्वकर्मा से की जाती है।** नेताओं के पास अपने बचाव का रास्ता था कि वह तकनीक का ककहरा भी नहीं जानते हैं और किसी भी निर्णय के लिए इंजीनियरों पर निर्भर करते हैं। इंजीनियरों के पास बहाना था कि लोगों की बाढ़ से तुरन्त रक्षा के लिए तटबन्ध बनाने के अलावा कोई रास्ता ही नहीं था क्योंकि बराहक्षेत्र बांध बनने में 15 साल का लम्बा समय लग जाता और बाढ़ पीड़ितों को इतने वर्षों तक इन्तज़ार करने के लिए नहीं कहा जा सकता है। उनके पास एक बहाना और था जिसे वह कभी सार्वजनिक नहीं करते कि वह स्वतंत्र रूप से कोई निर्णय नहीं लेते और उन्हें उन सारे फ़ैसलों का पालन करना पड़ता है जो कि राजनीतिज्ञ लेते हैं। नेताओं और इंजीनियरों दोनों के ही पास एक दूसरे की पीठ खुजलाने का पूरा-पूरा बहाना और औचित्य रहता है और इन सम्बधों पर कभी भी समय की मार नहीं पड़ती। **यह कतई जरूरी नहीं है कि राजनैतिक फ़ैसले लोकप्रिय होते हुये भी तकनीकी तौर पर सही हों। इस तरह से इंजीनियरों की ख़ामोशी की वज़ह से राजनैतिक फ़ैसलों पर भी तकनीकी औचित्य की मुहर लग जाती है। यह एक व्यावहारिक सच्चाई है कि इंजीनियर कितना भी बड़ा क्यों न हो, जो व्यवस्था है उसमें वह नेताजी के नीचे ही रहता है और सही तकनीकी राय देने में हमेशा संकोच करता है। इस समस्या का कोई समाधान नहीं है।**

अब तटबन्ध पीड़ितों ने सरकार पर दबाव बनाया कि उन्हें दूसरी जगह ले जाकर बसाया जाय मगर इस तरह के सम्पूर्ण पुनर्वास के लिए तो कहीं ज़मीन ही उपलब्ध नहीं थी। सरकार और नेताओं ने शायद यह कभी सोचा ही नहीं था कि भविष्य में लोग इतने

संगठित हो जायेंगे कि वह नेताओं से उनके किये गये वायदों का हवाला देने की हालत में आ जायेंगें। क्योंकि ऐसा अगर रहा होता तो परियोजना शुरू होने के काफ़ी पहले से पुनर्वास की तैयारी शुरू रहती। यह तो इतना फ़ासला तय कर लेने के बाद सरकार को यह एहसास हुआ कि अगर सारी सम्पत्ति का मुआवज़ा देना पड़ गया तो उसे तत्कालीन मूल्यों पर दस से बारह करोड़ रुपये ख़र्च करने पड़ेंगे और यह ख़र्च परियोजना के पूरे ख़र्च (37 करोड़ रुपये) को देखते हुये अनुपात से कुछ ज़्यादा ही था।

सरकार ने तटबन्धों के बीच फँसने वाले गाँवों का एक सर्वेक्षण करवा कर यह अनुमान लगाया कि तटबन्धों के अन्दर की कुल ज़मीन 2,60,108 एकड़ (1,05,307 हेक्टेयर) है और अगर खेती की ज़मीन, बाग-बगीचों और रिहायशी ज़मीन का मुआवजा 500 रुपये प्रति एकड़, कृषि योग्य परती ज़मीन का मुआवज़ा 200 रुपये प्रति एकड़ और बंजर ज़मीन के लिए 100 रुपये प्रति एकड़ की दर से भुगतान किया जाय तो इस काम के लिए नीचे दी हुई तालिका के अनुसार खर्च उठाना पड़ेगा।

खेती की ज़मीन	7,26,91,000	रुपये
वह ज़मीन जिस पर खेती नहीं होती	1,13,47,800	रुपये
बाग-बगीचा	4,56,000	रुपये
खेती के लिए अनुपयुक्त ज़मीन	50,49,200	रुपये
बासगीत ज़मीन	32,91,500	रुपये
योग	**9,28,35,500**	रुपये

इसी तरह अगर पक्की छतों वाले पक्के घरों क़ा मुआवजा 5 रुपये प्रति वर्ग फुट, खपड़े की छत मगर पक्की दीवारों वाले घरों के लिए 3.50 रुपये प्रति वर्ग फुट, कच्चे घरों के लिए 2.50 रुपया प्रति वर्ग फुट, खपड़े वाले कच्चे घरों के लिए 2 रुपये प्रति वर्ग फुट और साधारण फूस के बने घरों के लिए 0.75 रुपये प्रति वर्ग फुट का मुआवज़ा दिया जाय और उनकी मालियत पर 10 से लेकर 60 प्रतिशत का डेप्रिसिएशन दिया जाय तो सरकार को नीचे दी हुई तालिका के अनुसार पैसा ख़र्च करना पड़ेगा।

गृह निर्माण	65,94,904	रुपये
तालाब	27,92,325	रुपये
कूएँ	5,16,573	रुपये
पेड़-पौधे	8,44,888	रुपये
योग	**1,07,48,690**	रुपये

इस तरह के कुल मुआवज़े की रकम 10,35,84,190 रुपये बैठती है। इस में अगर 16 प्रतिशत राशि आवश्यक अर्जन के लिए अतिरिक्त जोड़ दी जाय तो कुल खर्च 11.90 करोड़ रुपये बैठता।

इसके अलावा सरकार ने माना कि इस मुआवज़े का कोई मतलब ही नहीं होगा क्योंकि इतनी ऊँची कीमत पर इतनी ज्यादा ज़मीन कहीं मिलेगी ही नहीं। इस समस्या का सामाधान केवल कृषि पद्धति और फ़सल चक्र के सुधार से ही संभव है। साथ ही अगर 10 से 11.50 करोड़ की सम्पत्ति का पूरा-पूरा मुआवज़ा देना पड़े तब तो योजाना का प्राक्कलन बेतरह बढ़ जायेगा और योजना ही खटाई में पड़ जायेगी।[16]

अब तय हुआ कि लोग तटबन्धों के बाहर पुनर्वास में रहें और अपनी पुश्तैनी ज़मीन पर खेती करें। उनका पुराना घर भी उन्हीं कब्ज़े में रहेगा। **पुनर्वासितों के भविष्य का इतना बड़ा फैसला सरकार ने अपने स्तर पर तटबन्ध पीड़ितों की बिना किसी रज़ामन्दी या मशविरे के ठीक उसी तरह किया जैसे कि अधिकांश अभिभावक बेटियों की शादी तय किया करते हैं। बेटी की भलाई किस चीज में छिपी है यह फ़ैसला सिर्फ़ पिता करता है और अभी तक हमारे समाज में लड़कियों को अपनी पसंदगी या नापसंदगी जाहिर करने का हक नहीं मिला है।** अब यह तय पाया गया कि क्योंकि पुनर्वास में रहने के कारण लोग अपनी ज़मीन से कट जायेंगे इसलिए उनके पुनर्वास स्थलों में प्रति 2000 व्यक्तियों के पीछे एक तालाब खुदवाया जायेगा जिसकी लागत 10,000 रुपये प्रति तालाब होगी। इसी तरह से हर 100 व्यक्ति पीछे एक कूएँ या ट्यूब वेल की व्यवस्था किये जाने का प्रस्ताव किया गया जिसकी प्रति इकाई लागत 500/-रुपये थी। हर 50 व्यक्ति के पीछे 250/-रुपये प्रति नाव की दर से नाव का प्रावधान किया गया। तटबन्ध के बाहर पुनर्वास के निर्माण के लिए 800/-रुपये प्रति एकड़ की दर से ज़मीन के अधिग्रहण का प्रस्ताव किया गया। इस मद में 15/-प्रतिशत की दर से आवश्यक अर्जन का शुल्क भी सरकार देने वाली थी। इसी तरह से पुनर्वास का जो नया नक्शा उभरा वह कुछ इस प्रकार था–

बासगीत की ज़मीन	75,64,400	रुपये
गृह निर्माण अनुदान	1,14,22,990	रुपये
तालाब	5,70,000	रुपये
कूएँ	5,70,000	रुपये
ट्यूब वेल	5,70,000	रुपये
नाव	5,70,000	रुपये
कुल योग	**2,12,67,390**	**रुपये**

पत्रांक 10234, दि. 6 सितम्बर 1957 को दी गई अपनी सिफ़ारिश में बिहार सरकार के सचिव टी. पी. सिंह ने कहा कि क्योंकि पुनर्वासितों को ज़मीन का मुआवज़ा नहीं दिया जा रहा है, इसलिए उनके साथ सहानुभूतिपूर्वक पेश आना चाहिये।[17]

सरकार को शायद यह भरोसा था कि इतना टुकड़ा फेंक देने के बाद लोग उसकी छीना-झपटी में मशगूल हो जायेंगे। केन्द्रीय जल और शक्ति आयोग के इंजीनियरों की चलती तो वह इतना भी नहीं होने देते। 2 मार्च 1956 को हुई कोसी कन्ट्रोल बोर्ड की मीटिंग में उन्होंने इस ओर इशारा भी किया था। दस्तूर यह है कि टोपियाँ सीने के लिए सिर का नाप लिया जाय मगर यहाँ तो पुनर्वास की टोपी तैयार थी और उसके नाप के सिर खोजे जा रहे थे।

पुनर्वास के मुद्दे पर परमेश्वर कुँअर के प्रश्न के उत्तर में डा. श्री कृष्ण सिंह ने बिहार विधान सभा को बताया (7 अप्रैल 1958) कि यह कहना सही नहीं होगा कि तटबन्धों के बीच में पड़ने वाले सभी गाँवों को बाढ़ से बह जाने का ख़तरा होगा। कुछ गाँवों को इस ख़तरे का सामना करना पड़ सकता है। यह भी संभव नहीं है कि तटबन्धों के बीच की सारी ज़मीन खेती के उपयुक्त नहीं रह जायेगी। यदि कुछ क्षेत्र खेती के लिए अनुपयुक्त हो जायेंगे तो इसकी भी संभावना है कि कुछ क्षेत्रों की उत्पादन शक्ति और बढ़ जा सकती है। उन्होंने यह भी कहा कि यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि तटबन्धों के बीच की सारी जनसंख्या को बाहर रहना पड़ेगा।[18] यह सही है कि उक्त क्षेत्र के लोगों के मन में यह आशंका हो गई है कि ऐसी परिस्थिति उत्पन्न हो जा सकती है।

चीन से लौटने के बाद डॉ० के० एल० राव और कंवर सेन ने जो रिपोर्ट दी थी उसकी भाषा भी ऐसी ही थी। यहाँ भी सरकार का सोच न्यायसंगत नहीं था। अगर किसी की ज़मीन पर ताज़ी मिट्टी पड़ गई या उसका किसी तरह से सुधार हो गया तो वह तो फ़ायदे में रहा मगर जिसकी ज़मीन कट गई, उस पर बालू पड़ गया या वहाँ जल-जमाव हो गया तब ऐसा किसान और उसका परिवार तो औसत के सिद्धान्त की भेंट चढ़ जायेगा। कटाव, जल-जमाव और बालू का भरना स्थिर होकर एक जगह रहने वाली चीज़ें नहीं हैं। इनके स्थान और परिमाण, दोनों बदलते रहते हैं- कोसी का चरित्र ही ऐसा है।

काफ़ी ज़िद्दो-ज़हद के बाद सरकार की तरफ़ से दीप नारायण सिंह ने बिहार विधान सभा में एक प्रस्ताव रखा (3 दिसम्बर 1958) और सरकार की तरफ़ से यह आश्वासन दिया कि,

(1) तटबन्धों के आसपास बाढ़ मुक्त ज़मीन में पुनर्वास किये जाने वाले गाँवों के समीप ही घर बनाने के लिए पर्याप्त भूमि उपलब्ध।

(2) सामूहिक सुविधाओं जैसे विद्यालय, सड़क आदि के लिए अतिरिक्त भूमि का प्रबन्ध।

(3) पुनर्वास किये गये स्थानों में तालाब, जलकूप, कुएं आदि द्वारा जलापूर्ति की व्यवस्था।

(4) गृह निर्माण के लिए अनुदान।

(5) तटबन्ध के बीच जहाँ कृषि कार्य होगा वहाँ आने-जाने के लिए यथेष्ट संख्या में नौकाओं का प्रबन्ध।

15 फरवरी 1960 के दिन जब विधान सभा में वार्षिक बजट पर बहस हो रही थी तब विधान सभा को बताया गया कि कोसी तटबन्धों के बीच फंसे 304 गाँवों में से 70 गाँवों को पुनर्वासित किया जा चुका था और बाकी गाँवों को बसाने की कोशिशें जारी हैं। बहस में रामानन्द तिवारी ने सरकार पर एक बड़ी तीखी टिप्पणी की। उन्होंने कहा कि, **"... अगर 304 गाँवों में से सिर्फ़ 70 गाँवों का दो वर्षों में पुनर्वास का काम हो सका है तो अगर इसी रफ़्तार से काम चला तो 9 साल का समय उन लोगों को बसाने में लग जायेगा। क्या इसी काम के लिए मैं आपकी पीठ थपथपाऊँ?"** रामानन्द तिवारी को क्या मालूम था कि यह काम 9 साल में भी नहीं होने वाला था।

8. भुगतान का निर्धारण

यह बात तो तय ही थी सरकार कभी भी ज़मीन के बदले ज़मीन नहीं दे पायेगी क्यों कि घनी आबादी वाले गांगेय क्षेत्र में 304 गाँव बसाने के लिए ज़मीन खोजना एक टेढ़ी खीर थी। देवेश मुखर्जी, चीफ इंजीनियर-कोसी प्रोजेक्ट (1963), ने लिखा कि स्थायी पुनर्वास में निम्न बातें शामिल होंगी। "...नदी और तटबन्ध के बीच में बने घरों की कीमत के बराबर घर बनाने के लिए अनुदान दिया जायेगा और पुनर्वासित होने वाले लोगों से उनके पुराने घरों के नाम पर कोई कटौती नहीं की जायेगी। यह भी तय किया गया है कि घर बनाने के लिए अनुदान किस्तों में दिया जायेगा।

(i) उन मकानों के लिए अनुदान जिनकी कीमत 200 रुपये या इससे कम है, दो किस्तों में दिया जायेगा।

(ii) दो सौ रुपयों से 5,000 रुपयों की मालियत के मकानों का भुगतान तीन किस्तों में होगा

(iii) पाँच हज़ार से अधिक मूल्य वाले घरों का भुगतान चार किस्तों में होगा।

पहली किस्त का भुगतान उसी समय कर दिया जायेगा जब सरकार अधिगृहीत ज़मीन के प्लॉट का आवंटन कर देती है। मौजूदा घरों की मालियत के एवज में मिली रकम में घर बनाने पर होने वाले ख़र्च की भी सीमा निर्धारित कर दी गई है। जिसके अनुसार,

(i) 1,000 रुपये मालियत वाले घरों में से 75 प्रतिशत करना होगा।

(ii) 1,000 से 5,000 रुपयों तक की मालियत पर 60 प्रतिशत।

(iii) 5,000 से 10,000 रुपयों तक की मालियत पर 50 प्रतिशत।

(iv) 10,000 से 15,000 रुपयों तक की मालियत पर 33 प्रतिशत

(v) 15,000 रुपयों से ज्यादा की मालियत पर 25 प्रतिशत।

मुखर्जी आगे कहते हैं कि, "...राज्य सरकार ने विस्थापितों की जीविका उपार्जन के उपाय तथा लघु और कुटीर उद्योगों के आंकड़ों का भी संकलन किया है जिससे पुनर्वासित लोगों के आर्थिक उत्थान के लिए उचित योजनायें बनाई जा सकें।"[19]

9. पुनर्वास–नौ दिन चले अढ़ाई कोस

सरकार के सारे आश्वासनों और दावों के बावजूद कोसी परियोजना में पुनर्वास के काम की रफ़्तार बड़ी ढीली थी। बैद्यनाथ मेहता ने विधान सभा में एक बड़ी मार्मिक अपील की, उन्होंने कहा कि, "...अब आप पाकिस्तान से आये लोगों की व्यवस्था करते हैं (तो) जो लोग इस काम के चलते परेशान हो रहे हैं और जिन लोगों नें आप को सहयोग दिया था, सहयोग ही नहीं दिया बल्कि श्रमदान करके बिना पैसे के उन्होंने तटबन्ध को बनवाया जिससे उनको काफ़ी नुकसान हो रहा था... सिर्फ़ एलेक्शन के वक़्त आप लोगों के पास जाते है और तरह-तरह के वादे करते हैं कि तुम हमको वोट दो, तुम्हारी मालगुजारी माफ़ हो जायेगी और जो ज़मीन की तुम्हें दिक्कत है वह दूर हो जायेगी, घर के बदले तुम्हें घर बना देंगे, ... लेकिन एलेक्शन के बाद आप सारी बातें उल्टी करने लगते हैं।[20]

1970 तक कोई 6650 परिवारों को तटबन्धों के बाहर लाकर बसाया गया जिसका मतलब था कि लगभग 35,000 परिवार तब भी कोसी तटबन्धों के बीच ही रह रहे थे। एक ओर जहाँ सरकार के सामने ज़मीन के अधिग्रहण की समस्या थी वहीं लोग एक दूसरे किस्म की त्रासदी झेल रहे थे। उनके पुनर्वास के स्थल अब उनके खेतों से काफ़ी दूर थे और वह इस दूरी को संभाल नहीं पा रहे थे। खेती की ज़मीन से सम्पर्क जीवन्त बनाये रखना लोगों के लिए मुश्किल हो रहा था क्योंकि वहाँ तक पहुँचने के लिए कोसी की कई धारों को पार करना पड़ता था जिसके लिए जिन "यथेष्ट संख्या में नौकाओं का प्रबन्ध" करने की बात कही गई थी वह नौकाएँ वहाँ थी ही नहीं। लेकिन सरकार के मुताबिक जो ज़्यादा अहम बात थी वह यह थी कि लोग अपने बाप-दादों की सम्पत्ति, अपना घर-द्वार, अपना परिवेश, अपनी नदी-नाले, अपने बाग-बगीचे, अपने मन्दिर-मस्ज़िद, अपने तालाब-पोखरों, अपने पेड़-पौधों का मोह भुला नहीं सके और उन से दूर रहना उनको गवारा नहीं हुआ। परमेश्वर कुँअर (1968) को सरकार की इस पैतृक सम्पत्ति और बाप-दादों के प्रति अनुराग वाले सिद्धान्त पर विश्वास नहीं था। अपने गाँव तरही की मिसाल देते हुये उन्होंने सरकार पर आरोप लगाया कि, "...वहाँ के लोगों की पुनर्वास की समस्या हल नहीं हो पाई है। ईश्वर के भरोसे उन्हें छोड़ दिया गया है। वहाँ से 4-5 मील पश्चिम दरभंगा जिला में बसने को कहा जाता है किन्तु वहाँ के लोग बसना नहीं चाहते हैं। जब सिंचाई मंत्री श्री चन्द्रशेखर सिंह हुये तो वहाँ के लोगों की दिक्कत को देखते हुये दूसरी जगह ज़मीन का अर्जन करने के लिए आदेश दिया किन्तु आज तक कुछ नहीं हो पाया है। आज यदि लोग अफसर के यहाँ जाते हैं तो कहा जाता है कि मिनिस्टर साहब के यहाँ जाइये

और मिनिस्टर साहब के यहाँ जाते हैं तो कहा जाता है कि अफसर के यहाँ जाइये। 1,200 बीघा ज़मीन जो अच्छी जगह पुनर्वास के लिए दी गई है उस पर बसने नहीं दिया जा रहा है। आज इसके कारण तरही गाँव के लोग परेशान हैं ... और उलटे कहा जाता है कि लोग गाँव की मोह-माया नहीं छोड़ना चाहते हैं।"[21] इसके अलावा लोग भावना में न बह कर अगर व्यावहारिक भी रहे होते तब भी उनके लिए पुनर्वास के गाँवों में रहना मुमकिन नहीं था क्योंकि समय के साथ वहाँ पानी लग गया और बहुत से पुनर्वास स्थल जल-जमाव से घिर गये। ऐसी अधिकांश जगहों में रिहाइश मुमकिन ही नहीं थी।

बिहार विधान सभा की एक लोक लेखा समिति के अनुसार 1958 से 1962 के बीच करीब 12,084 परिवारों को तटबन्धों के बाहर रिहायशी ज़मीन का आंवटन किया गया और उनको घर बनाने के लिए पहली किस्त की शक्ल में 16.73 लाख रुपयों का भुगतान किया गया। लेकिन जब काम में कोई प्रगति नहीं हुई तब परियोजना अधिकारियों द्वारा यह तय किया गया कि लोगों को नये आवास स्थलों पर जाने के लिए मनाया जाय और वह अगर फिर भी नहीं मानते हैं तो उनके ख़िलाफ़ अनुदान की वापसी की कार्यवाही करने की समिति ने सिफारिश की।[22]

बिहार विधान सभा की एक दूसरी समिति ने इसी समस्या को एक दूसरे दृष्टिकोण से देखा। इसका कहना था कि तटबन्धों के निर्माण में जिन लोगों के हितों की पूरी तरह से क़ुर्बानी हो गई वह साल के पाँच महीनें ख़ानाबदोशों की ज़िन्दगी जीते हैं। समिति लिखती है, "... सचमुच यह दु:खद विषय है। कोसी योजना में सालों-साल हजारों आदमियों की नियुक्ति होती है तथा लाखों रुपये की लूट ठीकेदार लोग करते हैं, किन्तु उक्त सम्बंधित व्यक्तियों की नियुक्ति अथवा ठीकेदारी में प्राथमिकता मिलने के बजाय उन्हें उपेक्षा ही मिलती है। स्थायी कर्मचारियों की तो बात ही दूर रहे, आठ-दस हजार कार्यभारित कर्मचारियों में भी इस क्षेत्र के लोगों की संख्या नगण्य है।" समिति ने आगे लिखा है कि, "...अभी जो पुनर्वास योजना चल रही है वह बिलकुल ही अनुपयुक्त है। वर्त्तमान योजना के अन्दर किसानों एवं खेतिहर मजदूरों को केवल बसने के लिए ही ज़मीन दी जाती है। उनके जीवन-यापन के लिए न तो ज़मीन दी जाती है और न ही इस इलाके में कोई उद्योग ही खड़ा किया जाता है। उन्हें केवल बसने के लिए दो कट्ठे ज़मीन दे दी जाती है और फूस के मकान के लिए थोड़े से पैसे दे दिये जाते हैं। इस पैसे का भी अधिकांश भाग इन पैसों को लेने में खर्च हो जाता है।"[23] **इस समिति की रिपोर्ट के अनुसार प्राक्कलित 2,12,67,390 रुपयों में से 1972-73 तक मात्र 1,75,28,392 रुपये खर्च हुये थे। 32,540 परिवारों को दिये गये अनुदान में मात्र 10,580 को अनुदान की दूसरी किस्त मिली और एक भी परिवार को तीसरी और अंतिम किस्त नहीं मिल पाई क्योंकि उनका घर पूरा नहीं बना था। पुनर्वास का काम पुनर्वास विभाग देखता था जबकि घरों की मापी**

का काम कोसी प्रोजेक्ट के इंजीनियर करते थे जिसकी वजह से लोगों को कई बार अलग-अलग जगहों पर दौड़ना पड़ता था।

अधिकांश विस्थापितों ने अपने पुराने गाँवों को लौट आने में ही अपनी भलाई देखी। उनके वापस आने का पहला कारण तो यह था कि उनके लिए अपने पुनर्वास से खेतों तक रोज़-ब-रोज़ आना जाना मुमकिन नहीं था। उसमें भी जो गाँव तटबन्ध से ठीक लगे हुये नदी की तरफ़ थे उन्हें तटबन्धों के बाहर वहीं पुनर्वास भी तटबन्धों के बाहर उतनी ही दूरी पर मिला मगर जो गाँव तटबन्ध से जितना दूर था उसका पुनर्वास भी तटबन्धों के बाहर उतनी ही या उससे अधिक दूरी पर मिला। उससे पुनर्वास और खेतों के फ़ासले बेसम्भाल दूरी पर हो गये और खेती कर पाना नामुमकिन सा होने लगा। इसके अलावा समय के साथ पुनर्वास स्थलों में बहुत सी जगहों पर पानी लग गया क्यों कि जो पानी स्वभाविक रूप से नदी में चला जाता था या जहाँ से छोटी नदियाँ या नाले कोसी में प्रवेश करते थे उनके मुहाने तटबन्धों ने बन्द कर दिये थे। तीसरी बात जो कि उतनी ही महत्त्वपूर्ण थी कि लोगों का अपनी पैतृक सम्पत्ति और अपने गाँव से स्वाभाविक लगाव था जिसके कारण लोग वापस अपने गाँवों को चले गये। इस वापसी की वज़ह से सरकार की पुनर्वास की फ़ाइलें बन्द होने लगीं और सरकार यह मानने लगी कि इस नैसिर्गिक लगाव के कारण लोग अपने गाँव-घर और ज़र- ज़मीन के पास ही रहना पसन्द करते हैं।

10. कितने पुनर्वासित-कैसे पुनर्वासित

तालिका 1 में कोसी तटबन्धों के बीच फँसी मौजूदा आबादी का एक संक्षिप्त विवरण दिया हुआ है। इस तालिका के बारे में हम इतना ज़रूर कहना चाहेंगे कि,

(क) कोसी क्षेत्र और समस्या में रुचि रखने वालों के बीच आज भी यह प्रचलित है कि कोसी तटबन्धों के बीच 304 गाँव फँसे हैं। यह एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि सुपौल के पुनर्वास कार्यालय के अधिकारी और कर्मचारी भी यही जानते और कहते हैं मगर इन गाँवों की सूची देते समय उनकी कलम 285 की संख्या पर अटक जाती है। जहाँ तक कोसी तटबन्धों के बीच फंसी आबादी का सवाल है उसके बारे में अलग-अलग लोग अलग-अलग संख्याएँ बताते हैं और यह संख्या 8 लाख से लेकर 16 लाख के बीच में घूमती है। हमने यथासंभव इस अटकलबाजी पर विराम लगाने की कोशिश की है और इस अध्ययन के अनुसार कोसी तटबन्धों के बीच 380 गाँव हैं जोकि 4 जिलों के 13 प्रखण्डों में फैले हुये है और उनकी आबादी (2001) लगभग 9.88 लाख है।

(ख) महिषी प्रखंड में घोंघेपुर गाँव के नीचे पश्चिम में कोसी पर तटबन्ध नहीं हैं। इसके दक्षिण में सहरसा जिले के सिमरी बख़्तियारपुर तथा सलखुआ प्रखंड पड़ते हैं। महिषी प्रखण्ड के नीचे कोपड़िया तक कोसी परियोजना केवल उन्हीं गाँवों को विस्थापित मानती है जोकि पूर्वी तटबन्ध बनते समय नदी और पूर्वी तटबन्ध के बीच में पड़ते थे।

नदी के पश्चिम के गाँवों को परियोजना विस्थापित नहीं मानती। सलखुआ प्रखंड का कबिराधाप गाँव इसका उदाहरण है। कोसी के पूर्वी तटबन्ध के निर्माण की वजह से नदी का पानी इस गाँव पर पहले से कहीं ज़्यादा चोट करता है। इस गाँव के रहने वालों को पुनर्वास भी नहीं मिला मगर इस गाँव की तकलीफ़ें किसी भी मायने में तटबन्धों के बीच रहने वाले गाँवों से अलग नहीं हैं। हमने कबिराधाप या इस तरह के दूसरे गाँवों को इस सूची में शामिल किया है।

(ग) कुछ एक गाँव, उदाहरण के लिए महिषी, को हम पुनर्वासित या कोसी परियोजना से पीड़ित मानते हैं यद्यपि इसका केवल एक छोटा सा कोठिया टोला तटबन्ध के अन्दर है और बाकी गाँव तथा उसकी ज़मीन तटबन्ध के बाहर है। महिषी और उसकी पूरी आबादी को तटबन्ध पीड़ित मानने के पीछे हमारा तर्क है कि तटबन्ध महिषी की ज़मीन पर हो कर गुज़रा है और महिषी की काफ़ी ज़मीन पुनर्वास के लिए अर्जित की गई और बची-खुची ज़मीन पर जल-जमाव हो गया है। यह सब तटबन्ध के कारण हुआ है। हमने इस तरह के सभी गाँवों को तटबन्ध पीड़ित मान कर इस सूची में जगह दी है।

(घ) होना तो यह चाहिये था कि खगड़िया जिले के जिन गाँवों पर कोसी के पानी की मार सिर्फ़ इसलिए पड़ती है कि कोसी के पूर्वी तटबन्ध का पानी उसे दूसरे किनारे पर (दक्षिण की ओर) ठेलता है, उनको भी इस सूची में शामिल किया जाता। यही बात समस्तीपुर के सिंघिया आदि और दरभंगा के कुछ प्रखंडों पर भी लागू होती है। हमारी मान्यता है कि घोंघेपुर के नीचे कुछ भी घटित हो रहा है उस पर अलग से एक अध्ययन हो और उसकी अलग पुस्तक बने। यह काम हम भविष्य के लिए छोड़ते हैं और फ़िलहाल अपने आप को सहरसा, सुपौल, मधुबनी और दरभंगा तक ही सीमित रखते हैं।

(ङ) यह संख्या केवल रेवेन्यू मौजों की है। टोले-मोहल्ले मिला कर यह संख्या हज़ार से भी ऊपर होगी। जनसंख्या का आधार भी जनगणना के स्रोत के बावजूद अनुमानित ही है क्यों कि तटबन्धों के अन्दर कौन कहां है और वह कब उजड़ कर दूसरी जगह चला जायेगा, यह निश्चित नहीं है। यहां अच्छी ख़ासी आबादी वाले गाँवों को बेचिराग़ी होते देर नहीं लगती।

(च) यहां थोड़ा अन्तर समय समय पर हुये पंचायतों के पुनर्गठन के कारण भी देखने में आता है। दरभंगा के कीरतपुर और मधुबनी के मधेपुर प्रखंड में फैला कई टोलों का नीमा गांव इसका एक उदाहरण है। नीमा और जोगिया नाम के दो टोले मधेपुर की बलथी पंचायत में पड़ते हैं जबकि नीमा टोले का कुछ हिस्सा अब कीरत पुर प्रंखड के सिमरी पंचायत में पड़ता हैं। खुद सिमरी पंचायत कभी झगरुआ पंचायत का हिस्सा हुआ करती थी। इन सब परेशानियों से बचने के लिए विभिन्न प्रखंडों के उपलब्ध नक्शों (1981 जनगणना) को तथा उनमें दिखाये गये तटबन्ध के रेखांकन को ही हमने आधार माना है। क्षेत्रीय स्तर पर इन्हीं नक्शों का हमने सत्यापन किया है।

तालिका 1

कोसी तटबन्धों के बीच फंसे गाँवों की प्रखण्डवार संक्षिप्त जानकारी

जिला	प्रखण्ड	गाँवों की संख्या	आबादी			अनुसूचित जाति की आबादी			शिक्षित आबादी			साक्षरता प्रतिशत		
			कुल	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला
मधुबनी	लौकही	12	47419	24697	22722	5211	2724	2487	14080	10989	3091	29-69	44-49	13-6
	घोघरडीहा	19	54289	27865	26424	3649	1868	1781	16874	12162	4712	31-08	43-64	17-83
	मधेपुर	42	96679	50029	46650	17953	9196	8757	23958	17663	6295	24-78	35-3	13-49
सुपौल	बसंतपुर	26	24520	12998	11522	4124	2139	1985	8347	5935	2412	34-04	45-6	20-93
	निर्मली/													
	भपटियाही	40	76403	39552	36851	9157	4652	4505	23308	18018	5290	30-5	45-55	14-35
	किशनपुर	32	100409	51939	48470	13831	7124	6707	28592	21753	6839	28-4	41-88	14-1
	मरौना	37	113192	58359	54833	13305	6783	6522	28310	23200	5110	25-01	39-75	9-31
	सुपौल	27	64563	33876	30687	9388	4912	4476	17020	12970	4050	26-36	38-28	13-19
सहरसा	नवहट्टा	43	112849	58519	54330	15334	7965	7369	32589	23193	9396	28-87	39-63	17-29
	महिषी	51	133694	69642	64052	28369	14583	13786	38275	26238	12037	28-63	37-68	18-79
	सिमरी													
	बख्तियारपुर	8	37886	19926	17960	8287	4274	4013	6852	5322	1530	18-08	26-7	8-51
	सलखुआ	34	72604	38201	34403	16251	8380	7871	14472	10971	3501	19-93	28-71	10-17
दरभंगा	कीरतपुर	9	53311	27529	25782	12367	6367	6000	14710	10645	4065	27-59	38-66	15-76
	योग	**380**	**987818513132474686**			**157226**	**80967**	**76259**	**267387**	**199059**	**68328**	**30.11**	**38.79**	**14.39**
	बिहार	**(2001)**										**47.53**	**60.32**	**33.57**
	भारत	**(2001)**										**65.38**	**75.85**	**54.16**

इस तालिका में प्राथमिक स्तर से ही यहाँ शिक्षा के आँकड़े चौकाने वाले हैं। अगर, उदाहरण के लिए, सहरसा जिले की बात करें तो यहाँ की साक्षरता दर मात्र 39.28 प्रतिशत (2001) है (पुरुष 52.04 प्रतिशत तथा महिला 25.31)। राज्य स्तर पर बिहार की साक्षरता दर 47.53 प्रतिशत है (पुरुष 60.32 प्रतिशत तथा महिला 33.57 प्रतिशत) जबकि 2001 में भारत में साक्षरता 65.38 प्रतिशत थी (पुरुष 75.85 प्रतिशत तथा महिला 54.16 प्रतिशत)। बिहार देश का अकेला राज्य है जहाँ साक्षरता का प्रतिशत 50 से नीचे है और उसमें भी घाटी के जिले सुपौल नीचे से सातवें, सहरसा नीचे से नवें, मधुबनी नीचे से तेरहवें और दरभंगा नीचे से सोलहवें स्थान पर है।

सच यह है कि पढ़ाई-लिखाई की व्यवस्था यूँ तो पूरे राज्य में चरमराई हुई है मगर तटबन्धों के बीच इसकी कुव्यवस्था के बहाने बड़ी आसानी से खोज लिए जाते हैं। कोसी तटबंधो के बीच फंसे जिस इलाके की बात हम यहाँ कर रहे हैं उसकी औसत महिला साक्षरता की दर 14.39 प्रतिशत है। राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं की साक्षरता की यह दर 1951 में थी और बिहार के स्तर पर 1982 में महिला साक्षरता 14.39 प्रतिशत रही होगी। सुपौल जिले के मरौना प्रखण्ड और सहरसा जिले के सिमरी बख्तियारपुर प्रखण्ड में कोसी तटबंधों के बीच महिला साक्षरता की दर 10 प्रतिशत से भी कम दिखाई पड़ती है। यही हाल पुरुष साक्षरता का भी है। तटबन्धों के बीच की मौजूदा पुरुष साक्षरता दर 38.79 प्रतिशत देश के स्तर पर 1960 और राज्य के स्तर पर 1982 में थी। यहाँ की कुल साक्षरता दर 30.11 प्रतिशत देश के स्तर पर 1963 में और बिहार के स्तर पर 1984 में रही होगी। इसका सीधा मलतब है कि जो लोग कोसी तटबन्धों के बीच में रह रहे हैं वह शिक्षा के क्षेत्र में पूरे देश से लगभग 40 वर्ष और बाकी बिहार से 20 वर्ष पीछे हैं। हम यहाँ एक बार फिर याद दिला दें कि बिहार साक्षरता दृष्टि से देश में सबसे निचले स्थान पर खड़ा है।

अगर किसी भी सभ्य समाज के जीवन स्तर को नापने के लिए साक्षरता कोई मापदण्ड हो सकती है तो हम अच्छी तरह जानते हैं कि कोसी तटबन्धों के बीच रह रहे लोगों का स्थान कहाँ है ? यहाँ के लोग अगर आज यह प्रण करें कि वह निरक्षरता के इस कलंक को मिटा देंगे तो बाकी देश के मुकाबले पहले उन्हें पहले यह 40 साल का फ़ासला तय करना होगा। इसके साथ ही ज़मीनी हक़ीक़त यह है कि पंचायत स्तर से लेकर पटना होते हुए दिल्ली तक किसी भी नेता के चेहरे पर इस बदहाली को ले कर कहीं कोई शिकन नहीं है। जब शिक्षा का यह हाल है तो बाकी नागरिक सुविधाओं की क्या स्थिति होगी, इसका अंदाज़ा बड़ी आसानी से लगाया जा सकता है। ऐसे में अनुसूचित जातियों का जीवन स्तर कैसा होता होगा वह किसी से छिपा नहीं है।

11. क्या कहते हैं भुक्त-भोगी

सहरसा जिले के सिमरी बख़्तियारपुर प्रखण्ड की बेलवारा पंचायत के मुखिया राम सागर बताते है कि, "... हमारे गाँव के पुनर्वास के लिए ज़मीन तटबन्ध के पूर्व में बेलवारा पुनर्वास में अर्जित की गई थी। गाँव के 90 प्रतिशत परिवार इस पुनर्वास से वापस हमारे पुराने गाँव में चले आये हैं क्यों कि पुनर्वास स्थल में जल-जमाव है। पुनर्वास की हमारी वह ज़मीन जो कि हमारी ही रहनी चाहिये थी वह सरकार के कब्ज़े में चली गई। हमारी इस ज़मीन की नीलामी सरकार हर साल खेती के उद्देश्य से करती है यानी यह ज़मीन अब हमारी नहीं रही। तटबन्धों के अन्दर जो हमारा मूल गाँव है वह कोसी की बाढ़ और कटाव से तबाह रहता है। पिछले 42 वर्षों में हमारा गाँव 14 बार कटा है और हमें हर बार नये सिरे से अपना घर बनाना पड़ता है। हमारे पास वहाँ रहने के अलावा कोई चारा भी नहीं है क्यों कि हमारी रोज़ी-रोटी और ज़मीन तो वहीं तटबन्धों के बीच में ही है। बरसात के मौसम में हम लोग हर साल पूर्वी तटबन्ध पर चले आते हैं और नदी का पानी उतरने पर वापस अपने गाँव चले जाते हैं। कुछ लोगों ने जरूर यहीं तटबन्ध पर ही अपने ठिकाने बना लिये हैं।"

इस तरह से लोग ज़मीन-जायदाद के पास तो जरूर पहुँच गये मगर नागरिक सुविधाओं से उनकी दूरी बढ़ गई क्यों कि वह तटबन्धों के बीच कैद हैं। उनका प्रखण्ड कार्यालय, अनुमण्डल कार्यालय और जिला मुख्यालय सब कुछ तटबन्धों से बाहर है। शिक्षा, स्वास्थ सुविधाएँ, कानूनी सहायता, प्रशासनिक सहायता, बैंक और रोजगार की सम्भावनाएँ हैं तो जरूर मगर सब तटबन्धों के बाहर के इलाके में। महिषी प्रखण्ड के पचभिण्डा गाँव के बिन्देश्वरी पासवान बताते हैं कि, "...किसी ज़माने में, तटबंन्धों के निर्माण से पहले, कोसी 16 धाराओं से हो कर बहती थी। उस समय की बाढ़ की तकलीफ़ों से लोगों का बचाव करने के लिए नदी पर तटबन्ध बना दिया गया। उस समय 16 धाराओं के फैले हुये इलाके में जो लोगों को तकलीफ़ें होती होंगी उसका कैपसूल बना कर उन लोगों के हिस्से में डाल दिया जो यहाँ तटबन्धों के बीच में फंसे हैं... यहाँ से हमारे प्रखण्ड कार्यालय महिषी जाने के लिए मल्लाह को 17 रुपये देने पड़ जाते हैं। इतना ही पैसा वापस लौटने के लिए भी चाहिये। जो लोग तटबन्धों के बाहर रहते हैं उन्हें तो कम से कम यह दण्ड नहीं भुगतना पड़ता है। एक दिन में महिषी जाकर लौटा भी नहीं जा सकता जिसका मतलब होता है कि आस-पास कहीं रिश्तेदारी या परिचय होना चाहिये रात बिताने के लिए। इतना हो तभी हम प्रखण्ड कार्यालय जा सकते हैं। अनुमण्डल और जिला मुख्यालय तो दूर की बात है। एक बार 1995-96 में हम लोग अपनी तकलीफ़ों के सामाधान के लिए कलक्टर के दफ्तर के सामने धरने पर बैठे और उन्हें एक माँग पत्र दिया। कलक्टर ने हम लोगों को बुला कर कहा कि आप लोगों की नींद 40 साल बाद खुली है ? अब हम लोग क्या

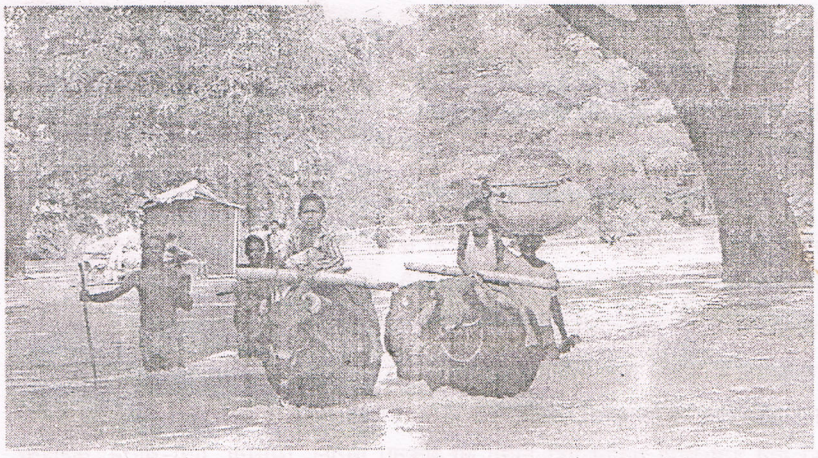

बरसात के मौसम में आवाजाही की यही भरोसेमन्द व्यवस्था है।

फोटो सौजन्य - नागेन्द्र कुमार सिंह

कहते, चले आये?"

धरने पर बैठे लोगों को कलक्टर ने भला-बुरा कह कर लौटा दिया कि उनकी नींद 40 साल बाद क्यों खुली थी? कलक्टर साहब शायद यह भूल गये कि खुद सरकार ने नींद में करवट 30 साल बाद ली थी जब 1987 में उसने कोशी पीड़ित विकास प्राधिकार की स्थापना की। इस प्राधिकार की स्थापना के 8-9 साल के निखट्टूपन के बाद अगर तटबन्ध प्रभावित लोगों ने सरकार के सामने गुहार लगाई तो क्या बुरा किया ? ऐसी सरकारें हमारी तक़दीर की मालिक जरूर होती हैं मगर वह कभी हमारी नहीं होतीं।

उधर तटबन्धों द्वारा सुरक्षित गाँव महिषी के केदार मिश्र का कहना है कि, "...यह कोसी का इलाका अब मिनी चम्बल बन गया है। अब यहाँ आम आदमी की हिम्मत नहीं पड़ती कि वह तटबन्धों के बीच में या पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम चला जाये। हम लोगों से कहा गया था कि ज़मीन के बदले ज़मीन, घर के बदले घर, तटबन्धों तक के लिए सम्पर्क सड़क और मुफ़्त नाव की व्यवस्था की जायेगी। इन वायदों का क्या हुआ? हमारे देवन बन और भकुआ गाँव कब के कट कर नदी में विलीन हो गये, उन गाँवों के लोग आज कल कहाँ है, कोई हमें बतायेगा? दुनियाँ की कौन सी ऐसी नियामत है जिसका ज़िक्र कोशी पीड़ित विकास प्राधिकार के प्रावधानों में नहीं है मगर कोशी पीड़ित विकास प्राधिकार खुद कहाँ है और क्या करता है, यह हमें कैसे पता लगेगा? किसी के पास प्राधिकार का पता है क्या? महिषी के पुनर्वास स्थल में महिषी के थाने का कब्ज़ा है और वह भी ज़बरदस्ती। लिलजा वालों का पुनर्वास जलै में दिया गया जहाँ पहुँचने के लिए 5 धारों को पार कर के जाना पड़ता है। 2004 में तो इस गाँव में कमला माई की कृपा से चारों ओर मिट्टी

पड़ गई है पर कल क्या होगा कौन जानता है ? नाव वाले 25 रुपया ले लेते हैं एक ओर का तब ऐसी जगह जाकर कौन रहेगा ? तटबन्धों के बीच साक्षरता दर 10 प्रतिशत या उससे भी कम होगी और स्वास्थ्य सुविधाएँ तो करीब-करीब ग़ायब हैं। यही तो है हमारा पुनर्वास।"

मज़े की बात है कि महिषी प्रखण्ड के वह गाँव जो कि कोसी के पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में बसे हुये हैं उनकी हालत तो कोसी तटबंधों के बीच या कमला तटबन्धों के बीच बसे हुये गाँवों से भी बदतर है। जलै, मनुअर, संकरथुआ, घोंघेपुर, पचभिण्डा, समानी, गण्डौल, तथा भंथी जैसे गाँव कोसी और कमला के पानी पर तैरते हैं क्यों कि इस इलाके में भीषण जल-निकासी की समस्या है। जैसे इतना ही काफ़ी न हो, इसमें बागमती का पानी कोढ़ में खाज की स्थिति पैदा करता है। इन गाँवों में रहने वाले लोगों की हालत को ख़ुद देखे बिना यक़ीन नहीं किया जा सकता। बिरौल, सिंघिया, गौरा-बौराम, कुशेश्वर स्थान, कीरतपुर और घनश्यामपुर प्रखण्डों के अधिकांश गाँवों की स्थिति भी कोई भिन्न नहीं है।

12. कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार

पुनर्वास की नौटंकी के बाद अब जो होने वाला था वह तो जाहिर था। बहुत से लोग मन मार कर चुपचाप कोसी तटबन्धों के बीच ही रह गये मगर पुनर्वास का भूत रह-रह कर नेताओं और अधिकारियों को डराता रहता था। कोसी प्रोजेक्ट के प्रशासक टी. पी. सिंह ने कोसी समिति द्वारा आयोजित एक गोष्ठी में 15 दिसम्बर 1954 को पटना में कहा था कि सरकार उन लोगों की समस्या के प्रति पूरी तरह से जागरूक है जो कि कोसी तटबन्धों के बीच में फंसने वाले हैं या जिन्हें बाढ़ से होने वाली तबाही झेलनी पड़ती है। सरकार न तो मुआवज़े की मांग को हल्का कर के देखती है और न ही लोगों के प्रति अपनी जिम्मेवारी से पीछे हटेगी।[24] कुछ इसी तरह का बयान 8 नवम्बर 1986 को तत्कालीन मुख्यमंत्री बिन्देश्वरी दूबे ने घोघरडीहा में दिया था।[25] पिछले 32 वर्षों में आने वाली सरकारों ने कोसी प्रोजेक्ट में पुनर्वास समस्या को कितनी गंभीरता से लिया उसका अन्दाज़ा इन दो बयानों से लग जाता है।

दरअसल यह तो क़रीब-क़रीब शुरू से ही तय था कि सरकार घर के बदले घर तो दे सकती है मगर ज़मीन के बदले ज़मीन इस इलाक़े में ज़्यादा परिमाण में कभी भी नहीं दी जा सकती। यह बात कभी भी लिखित रूप से नहीं कही गई कि सरकार ज़मीन के बदले ज़मीन देगी और न कभी यह लिखित रूप में कहा गया कि परिवार पीछे एक आदमी को सरकार नौकरी देगी यद्यपि इलाके का हर बुज़ुर्गवार आदमी इस बात को बड़े यक़ीन के साथ कहता है कि उससे किसी न किसी नेता या अफ़सर ने यह जरूर कहा

था कि इन वायदों पर अमल होगा। उनकी सूची में जवाहर लाल नेहरू, गुलज़ारी लाल नन्दा, ललित नारायण मिश्र, टी. पी. सिंह और सचिन दत्त से लेकर दरभंगा के तत्कालीन कलक्टर जॉर्ज जैकब तक नाम शामिल है। आर्थिक पुनर्वास की बात लिखित रूप से जरूर उठती थी और इसके पीछे बिहार के पहले मुख्य मंत्री डॉ. श्री कृष्ण सिंह की कुछ अवधारणा निश्चित रूप से थी। तत्कालीन सरकार के प्रखर आलोचक बैद्यनाथ मेहता और परमेश्वर कुँअर जैसे लोग भी डॉ. श्री कृष्ण सिंह की इस दृष्टि के लिए उनको समय-समय पर विधान सभा की बहस में याद किया करते थे। बाद में कृष्ण बल्लभ सहाय ने एक बार जरूर (12 फरवरी 1966) विधान सभा में यह कहा था कि सरकार तीसरी पंचवर्षीय योजना में सहरसा में महिषी में एक 'सी टाइप' औद्यौगिक प्रांगण खोलने जा रही है जिससे तटबन्धों के बीच के लोग लाभ उठा सकते हैं। ऐसा ही एक प्रांगण बिहटा (शाहाबाद) में भी खुलने जा रहा था अत: महिषी वाली इन्डस्ट्रियल एस्टेट का तटबन्धों के बीच बसे लोगों से कोई सीधा संबंध नहीं था। यह सरकार के नियमित विकास कार्यक्रम का हिस्सा था।

आर्थिक पुनर्वास के लिए सरकार ने 1962 में ही कृषि, स्वास्थ्य, उद्योग, राजस्व समाहरण, साख का विस्तार, सहकारिता को बढ़ावा देने जैसे विभिन्न मुद्दों पर कार्यक्रम तैयार करने के लिए और उनके क्रियान्वयन के लिए एक समिति गठित की थी। राज्य के भूमि सुधार आयुक्त विकास आयुक्त और नदी घाटी योजना के मुख्य प्रशासक इसके सदस्य थे। यह एक प्रभावहीन समिति निकली। फिर 1967 में कोशी क्षेत्रीय विकास आयुक्त की अध्यक्षता में एक दूसरी समिति बनी जिसे कृषि, सहयोग एवं उद्योग के विकास के लिए तथा लोगों के आर्थिक पुनर्वास का कार्यक्रम तैयार करने के लिए कहा गया। इस समिति से भी कुछ नहीं हुआ।

पुनर्वास के या कोसी तटबन्ध के बीच रहने वालों के मसले पर सरकार का जो भी रुख़ था उससे एक ओर पुनर्वास के लिए किसी तरह की तैयारी का न होना साफ़ झलकता था तो दूसरी ओर इस मसले पर उदासीनता भी कम नहीं थी। बैद्यनाथ मेहता (1966) का मानना था कि, **"...जिस कोसी के लिए आप दाद लेना चाहते हैं, जिसकी लाश पर आए इस योजना को खड़ा किया है उन कोशी के तटबन्धों के बीच में पड़ने वाले लोगों की ओर क्या इस सरकार का ध्यान गया है?**

तटबन्धों के बीच में पड़ने वालों की संख्या पौने दो लाख के लगभग हैं। इसके जीवन मरण का प्रश्न आज हमारे सामने है। हमारे राज्य मंत्री की तरफ से इस ओर कोई इशारा नहीं किया नहीं गया है। कोशी तटबन्ध के बीच में रहने वाले की जब चर्चा होती है तो इस पर मिनिस्टर आँख मूंद लेते हैं। जिस समय यह तटबन्ध बनने जा रहा था उस समय भी मैंने यह प्रश्न उठाया था कि कोशी तटबन्ध बनेगा तो उसके बीच पड़ने वालों की क्या हालत होगी तो उस समय केन्द्र और राज्य के

नेता ने कहा था कि तटबन्ध के बीच में पड़ने वाले लोगों में कोई फर्क नहीं पड़ेगा। सिर्फ एक डेढ़ फीट पानी रहेगा। उनकी सारी दिक्कतों को दूर कर दिया जायेगा।"[26]

बहुत मान-मनौवल और दबाव पड़ने के बाद राज्य सरकार ने फरवरी 1981 में सहरसा जिला परिषद् के तत्कालीन अध्यक्ष, चन्द्रकिशोर पाठक की देख-रेख में एक समिति का गठन किया जिससे आशा की गई थी कि वह तटबन्ध पीड़ितों के आर्थिक पुनर्वास पर अपनी सिफ़ारिशें देगी। इस समिति की रिपोर्ट सरकार को फरवरी 1982 में मिल गई जिस पर सरकार ने सक्रिय रूप से पाँच साल, जनवरी 1987 तक, विचार किया और फिर इसे स्वीकार कर लिया। बिन्देश्वरी दूबे ने घोघरडीहा में जब 1986 नवम्बर में तटबन्ध पीड़ितों के लिए कुछ करने की बात कही थी तब यह मुमकिन है, उनके मन में पाठक समिति की सिफ़ारिशों को स्वीकार करने का ख़्याल रहा हो।

इस रिपोर्ट में समिति ने तटबन्धों के बीच के क्षेत्र में कृषि विकास, पशुपालन, उद्योग, जन स्वास्थ्य, शिक्षा, चेतना प्रसार और भूमि सुधार आदि विषयों पर विषद चर्चा की है।

जहाँ तक कृषि का सम्बन्ध है इस क्षेत्र की स्थल आकृति (Topography) बाढ़ के कारण प्रति वर्ष बदलती रहती है। इसलिए यह स्पष्ट है कि खेती के लिए कोई नुस्खा तो तैयार करके नहीं दिया जा सकता है परन्तु पाठक समिति ने पूरे क्षेत्र को लगभग चार भागों में बाँटा है जैसे कि बाढ़ मुक्त क्षेत्र, लगभग तीन महीने तक पानी में डूबे रहने वाले क्षेत्र, लगभग 6 महीने तक पानी में डूबे रहने वाले क्षेत्र तथा हमेशा पानी में डूबे रहने वाले क्षेत्र। इन विभिन्न क्षेत्रों के लिए वैकल्पिक फसल पद्धति सृजन करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है जिससे कि (1) उन्हें बाढ़ आने से पहले काटा जा सके। (2) जल-जमाव वाले क्षेत्रों में पानी बर्दाश्त करने वाली धान की फसलें लगाई जाएँ। जहाँ सिंचाई की आवश्यकता हो वहाँ उद्वह सिंचाई प्रकल्प या बाँस बोरिंग की व्यवस्था की जाय तथा वैज्ञानिक खेती करने के लिए पर्याप्त शिक्षा, फार्म प्रदर्शन तथा आर्थिक स्रोत का विकास जैसे बैंक, सहकारी समिति के गठन आदि के कार्यक्रम सरकारी स्तर पर लिए जायें।

इस क्षेत्र में पशुपालन जीविका का मुख्य स्रोत है। दूध और इसके उत्पादनों से यहाँ काफी लोगों की रोज़ी-रोटी चलती है। और इसके विकास की प्रचुर सम्भावनाएँ हैं। सूअर, बकरी, भेड़, मुर्गी पालन के बारे में भी व्यवस्था इस समिति ने अपनी रिपोर्ट में दी है। पशु चिकित्सा सेवा केन्द्र तथा कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों के विकास की अनुशंसा भी की गई है। लघु और कुटीर उद्योगों के विकास पर भी विस्तार से चर्चा हुई है जिसमें आटा चक्की, आरा मशीन, मोटर गैरेज, लकड़ी, फर्नीचर, रस्सी निर्माण, मधुमक्खी पालन, चर्म शोधन, बेकरी, चमड़े के सामानों का उत्पादन, छापाखाना, सिले-सिलाए कपड़ों का बनाना, मंगलोर टाइल्स, ईंट भट्टा, सीमेंट से बने सामानों का निर्माण, सुगंधित तेल, कृषि यंत्र निर्माण, अन्न शोधन, लाह या लोहे की चूड़ी का निर्माण, चटाई, बीड़ी, चूड़ा बनाना, दर्जी की

दुकान, अम्बर चर्खा, रेशम कीट पालन, लाजेंस, आइस क्रीम बनाना, कागज के ठोंगे बनाना, स्याही तथा रंग बनाना, कोयले के ब्रिकेट बनाना, जूता पॉलिश तथा नाखून पॉलिश, माचिस बनाना, कुम्भकारी, जाल बुनाई, कम्वल बुनाई, पोलिथीन बैग बनाना, सर्जिकल कॉटन, दानेदार खाद, नाव बनाना, फिनायल बनाना, ग्रिल बनाना, गुड़-खाँडसारी का काम, पापड़ बनाना, घड़ी मरम्मत, रेडियो मरम्मत, डिस्टिल्ड वाटर, फिश कैनिंग, तथा कोल्ड स्टोरेज आदि की स्थापना और विकास के बारे में कहा गया है। ग्रामीण क्षेत्र के काफ़ी उद्योग इस सूची में आ जाते हैं। मत्स्य पालन और उसके विकास के बारे में भी रिपोर्ट में ज़िक्र हुआ है।

इसके साथ-साथ जन-स्वास्थ्य, शिक्षा, सामाजिक शिक्षा, चेतना विकास के पहलुओं को भी इस रपट में छुआ गया है और इनके लिए रास्ते भी सुझाये गये हैं।

समिति ने सहरसा, सुपौल, मधेपुरा, अररिया, पूर्णिया, कटिहार, दरभंगा और मधुबनी जिलों में, जहाँ कोसी तटबन्धों के निर्माण से (तथाकथित रूप से) लाभ पहुँचा है वहाँ की क्लास-3 और क्लास-4 दर्जे की नौकरियों में कोसी तटबन्धों के बीच बसे लोगों के लिए 15 प्रतिशत आरक्षण का भी प्रस्ताव किया है।

30 जनवरी 1987 को बिहार मंत्रिमंण्डल की एक बैठक में इन सिफारिशों का अनुमोदन कर दिया गया था और तब भले ही 30 वर्षों के बाद ही सही, जब कि तटबन्धों के बीच बसे लोगों की एक पीढ़ी समाप्त हो गई और आबादी 1,92,000 से बढ़ कर लगभग 4,50,000 हो गई, सरकार का यह प्रयास स्वागत योग्य था।

सरकार ने यह सिफ़ारिशें मानते हुये कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार की स्थापना करना स्वीकार कर लिया और 14 अप्रैल 1987 को एक 19 सदस्यीय समिति को इसकी देखभाल के लिए नियुक्त किया। इस समिति की अध्यक्षता उन्हीं लहटन चौधरी को मिली जिन्होंने कहा था (1986) कि, "...अपनी कब्र उन्होंने स्वयं खोदी, इस आशा में उन्हें कब्र से निकाल कर सरकार पुनः जीवन प्रदान करेगी। लेकिन अफसोस के साथ कहना पड़ता है कि आज उनके लिए दो बूंद आसू बहाने वाला भी कोई नहीं है।"[27] तीस साल बाद ही सही, तटबन्ध पीड़ितों के लिए आंसू बहाने और कुछ कर पाने का संतोष उन्हें जरूर हुआ होगा। दूबे ने 'कोसी पीड़ित प्राधिकार के प्रस्तावित कार्यक्रम' नाम की एक पुस्तिका (1987) के प्राक्कथन में कहा कि, "...कोशी नदी पर तटबन्ध बन जाने के पश्चात तटबन्धों के भीतर के लाखों लोगों का जीवन बड़ा ही कष्टमय रहा है। शायद ही देश में कोई ऐसा स्थान मिले जहाँ इतनी बड़ी आबादी नदी की धाराओं के बीच पड़ी हो। मुसीबत के मारे ये लोग जीवन से निराश हो बैठे थे... सरकार इन पीड़ितों के सर्वांगीण विकास के लिए कृत संकल्प है। एक प्राधिकार का भी गठन कर दिया गया है... जिससे लोगों के जीवन में एक बार फिर

सुरक्षित रिहाइश के लिए तटबन्ध ही सबसे अच्छी जगह है

से खुशियाली आ सके।"[28] पिछले 33 वर्षों की कवायद का कुल परिणाम यही था।

लेकिन यह प्राधिकार अपनी पैदाइश से लेकर इस समय तक एक नाकारा संस्था है। कुछ राजनीतिज्ञ और सरकारी अधिकारी प्राधिकार के नाम पर तनख़्वाह, भत्ते पाते होंगे और सरकारी ख़र्च पर उनके घूमने-घामने का इंतज़ाम भी हो गया होगा और पीड़ितों के नाम पर कभी-कभार सबसे मिलना जुलना हो जाता होंगा मगर पीड़ित अपनी जगह पर उसी तरह से बने हुये हैं जैसे कि वह आज से कोई 50 साल पहले थे। प्राधिकार का न तो कोई अपना भवन है न अपना दफ़्तर, न गाड़ी-घोड़ा है न अपना स्टाफ़। अपना कहने भर को बजट भी नहीं है। ज़्यादा-से -ज़्यादा यह दूसरे विभागों को 'सलाह' दे सकता है कि फ़लां फ़लां काम कर दीजिये। उसने कर दिया तो वाह-वाह, नहीं किया तो कोई बात नहीं। सहरसा के विकास भवन में पहली मंज़िल पर इसे थोड़ी सी जगह मिली हुई है मगर अधिकांश सरकारी अधिकारियों को भी यह नहीं पता है कि यह प्राधिकार का दफ़्तर है। **प्राधिकार ने अपनी एक बैठक में 1989 में यह निर्णय लिया था कि वह नदी के घाटों पर से घटवारी प्रथा को समाप्त करेगा और लोगों के आने-जाने की व्यवस्था को कर मुक्त ़कर देगा-यह आज तक नहीं हुआ। प्राधिकार ने राहत और पुनर्वास विभाग से बाढ़ के मौसम में मुफ़्त नावों की व्यवस्था करने को कहा-यह भी नहीं हुआ?। प्राधिकार ने बलुआहा घाट से बघवा गाँव तक और भेजा से बकौर तक पीपा पुल के साथ बारह-मासी रास्ते का प्रस्ताव किया-यह अभी तक प्रस्तावित**

है। प्राधिकार की इच्छा है कि तटबन्ध के अन्दर स्कूलों की अपनी बिल्डिंग हो क्यों कि वहाँ के अधिकांश स्कूलों पर छत नहीं है। यह प्रस्ताव वह संस्था करती है जिसकी खुद अपनी बिल्डिंग और अपनी छत नहीं है। स्वास्थ्य सेवायें वहाँ नदारद हैं। बिहार की सरकारी सेवाओं में क्लास-3 और क्लास-4 की नौकरियों में 15 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था प्राधिकार के प्रावधानों में थी जिसमें एक भी अतिरिक्त पैसा ख़र्च नहीं होने वाला था। इस प्रावधान का प्रयोग करते हुये बिहार सरकार में कितने लोगों को नौकरी मिली यह अपने आप में शोध का विषय है। प्राधिकार के जो भी कर्मचारी हैं वह सब डेपुटशन वाले लोग हैं, उनमें भी किसी तटबन्ध पीड़ित को नौकरी नहीं दी गई तटबन्धों के बीच कोई कॉलेज, कोई बैंक, कोई सिनेमा हॉल, कोई पक्की सड़क, कोई अस्पताल या बिजली जैसी कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे अधुनिक जीवन शैली से जोड़ कर देखा जा सके। पिछले कुछ वर्षों में डब्लू. एल. एल. सेवायें जरूर चालू हुई हैं। अगर कोई आदि काल की फ़िल्म बनाना चाहे तो कोसी तटबन्धों के बीच की जगह से आसान और बेहतर शायद कोई जगह न मिले। वहाँ यह काम बिना किसी तैयारी के किया जा सकता है।

प्राधिकार अब चुनावों में वोट पाने का जरिया बना हुआ है। जब-जब चुनाव होने को होते हैं तब-तब चुनाव जीतने की इच्छा रखने वाले सभी उम्मीदवार "कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार" का झुनझना ज़ोर-शोर से बजाते हैं कि अगर वह जीत कर आ जाते हैं तो प्राधिकार को ज़िन्दा करेंगे और उसकी सिफ़ारिशों को लागू करवायंगे। ऐसा तो नहीं है कि 1987 के बाद से इस इलाके में चुनाव न हुये हों और नेताओं ने चुनाव न जीते हों। उधर मतदाताओं का भी मानना है कि जब तक प्राधिकार पुर्नजीवित नहीं होगा तब तक उनकी हालत नहीं सुधरेगी। कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार तो मरा हुआ पैदा ही हुआ था और यह न तो कभी ज़िन्दा था और न कभी इसमें हरकत आयेगी।

तेलवा गाँव (प्रखण्ड महिषी, जिला सहरसा) के राम प्रसाद 'रोशन' का कहना है कि, "...हमारा गाँव कोसी के पश्चिमी तटबन्ध से नदी की ओर 1.5 किलोमीटर दूर है। हम लोगों को पुनर्वास मिला जल्लै में जो कि पश्चिमी तटबन्ध के दूसरी तरफ तटबन्ध से 4 किलोमीटर के फ़ासले पर है। कोसी तटबन्ध घोंघेपुर में ख़त्म हो जाता है और कोसी नदी का पानी वापस मुड़ कर बहुत से गाँवों के साथ-साथ जल्लै पर भी चोट करता था। हम लोगों ने कोसी के इस वापसी पानी से अपनी सुरक्षा की गुहार लगाई तो सरकार ने घोंघेपुर के नीचे एक टी-स्पर बना दिया जिससे कोसी का पानी पीछे नहीं मुड़ सके। इस स्पर ने तो अपना काम किया और कोसी के पानी से हम लोगों को निज़ात मिली मगर ऊपर से आने वाला बलान नदी का पानी जो कि कोसी में जाता था, इस स्पर के कारण अटक गया। अब हम कोसी की बाढ़ से तो बच गये थे मगर बलान के पानी में डूब गये।

हमारा पुश्तैनी गाँव कोसी तटबन्धों के बीच बाढ़ में डूबता था और पुनर्वास वाला गाँव बलान के पानी से निकल नहीं पाता था। अब हमें जाने के लिए कोई जगह नहीं बची। तब हम लोग जल्लै छोड़ कर कोसी के पश्चिमी तटबन्ध पर 49.5 किलोमीटर पर पचभिण्डा आ गये। यह तटबन्ध भी 1968 में कई जगह टूट गया और तब हम लोगों को मजबूर होकर वापस तेलवा आना पड़ गया। जल्लै में पुनर्वास की 4 हेक्टेयर ज़मीन थी और सहरवा में 14 हेक्टेयर पुनर्वास की ज़मीन थी जिस पर छोरा, झखरा, झारा, करहारा, सुगरौल, लछमिनियाँ और मजराही के लोगों को पुनर्वास मिला हुआ था। यह सब के सब लोग वापस अपने अपने गाँवों में चले गये हैं। ...हम लोग आदिम परिस्थितियों में जी रहे हैं और हमारी हालत को बिना देखे समझा नहीं जा सकता। कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार हम लोगों के लिए शुरू किया गया था मगर यह क्या करता है मुझे नहीं मालूम। सब कोरी बकवास है।"

पुनर्वास के नाम पर जो ख़ाना पूरी और बदइन्तज़ामी हुई उसके बारे में बताते हैं कोसी मुक्ति संघर्ष समिति के रमेश चन्द्र झा, देखें बॉक्स-सब नियम कानून ताक पर थे।

सब नियम कानून ताक पर थे।

"मेरा गाँव बेला गोठ, थाना नं. 142, प्रखंड किशनपुर, जिला सुपौल में था। 5 भाई थे हम लोग और 36 डेसिमल ज़मीन में घर था हम लोगों का, सब चला गया कोसी तटबन्ध के बीच। तब मिला पुनर्वास महुआ में। वहाँ 21 एकड़ ज़मीन थी जिसमें 14 एकड़ बेला गोठ वालों के लिए थी और इसकी नपाई 1959 में हुई। यहाँ बासडीह के अलावा 40 फ़ीसदी ज़मीन ऊपर से जोड़ी गई रास्ता, पोखर, खेल मैदान, श्मसान और कब्रिस्तान वगैरह के लिए। यहाँ बेला गोठ के अलावा सुरती पट्टी, बेगमगंज और पंचगछिया गाँवों को भी पुनर्वास मिला था। जितनी ज़मीन हम लोगों को मिली वह हमारी जरूरतों के हिसाब से बहुत कम थी। इस तरह से हम लोगों ने महुआ का पुनर्वास छोड़ दिया।

2/3 डेसिमल ज़मीन में हम लोगों को घर बना पाना संभव नहीं था। मैं यहाँ पुनर्वास दफ़्तर में काम करता था इसलिए हम लोगों ने महुआ की ज़मीन का ट्रान्सफर यहाँ खरैल मलहद में करवा लिया और यहीं बस गये। विभाग में काम करने का मुझे इतना फ़ायदा जरूर हुआ कि मुझे मालुम था कि कौन-सी ज़मीन खाली है। यह ज़मीन अब हमारे नाम से आवंटित है।

मुझे पहले छोटानागपुर की सिंचाई परियोजनाओं के पुनर्वास दफ़्तरों में काम करने का भी थोड़ा-बहुत अनुभव था। वहाँ पाँच आदमियों का परिवार माना जाता था, पुनर्वास के लिए प्रति परिवार 25 डेसिमल ज़मीन दी जाती थी और हर शादी-शुदा व्यक्ति एक अलग इकाई माना जाता था। मैंने यह सारी बातें सुपौल के पुनर्वास कार्यालय को लिख कर दी थीं मगर कहीं कोई कार्यवाही नहीं हुई।

यहाँ कोसी परियोजना में 304 गाँवों का पुनर्वास होना था जिनके लिए पूरब में 59 और पश्चिम में 74 पुनर्वास स्थलों का अधिग्रहण किया गया। यहाँ खरैल-मलहद में 111.78 एकड़ ज़मीन अर्जित की गई थी खोखनाहा, सुकैला, बेला परासबन्नी, बलवा, कर्ण पट्टी और फकिरना के लिए मगर यहाँ तटबन्धों के अन्दर के कम से कम 18-20 गाँवों के लोग रहते होंगे। इनमें से कुछ आधिकारिक रूप से तो कुछ ज़मीन के पर्चे के बिना अनाधिकारिक तौर से भी रहते होंगे। अब अगर आप यह खोजने बैठें कि किस पुनर्वास में किन-किन गाँवों के लोग रहते हैं तो यह आप को कैसे पता लग पायेगा? यह आपको कौन बतायेगा कि वह यहाँ अनाधिकारिक रूप से रह रहा है और उसकी ख़ुद की पुनर्वास की ज़मीन किसी दूसरे गाँव में है ? घीवक, घूरन, निर्मली, सुकुमारपुर, दिघिया, दुबियाही, और मैनहा आदि गाँवों के लिए तो ज़मीन का अधिग्रहण हुआ ही नहीं। यह सारे लोग या तो अपने पुराने गाँव में हैं या फिर तटबन्ध पर हैं। यह भी संभव है कि कुछ परिवार इधर-उधर घुस कर किसी दूसरे पुनर्वास में रहते हों।

जिस ज़मीन पर होकर तटबन्ध गुज़रा उसका मुआवज़ा हम लोगों को मिला, उस पर खड़ी फ़सल का मुआवज़ा हम लोगों को हमें मिला और इसी तरह से जहाँ-जहाँ से होकर नहरें गुज़रीं, उस ज़मीन का मुआवज़ा मिला, यहाँ तक कि, मिट्टी के मोल ही सही, पेड़-पौधों तक का मुआवज़ा मिला। अगर यह सब सही है तो जो हमारी ज़मीन तटबन्धों के अन्दर चली गई उसका मुआवज़ा या उसके बदले हमको ज़मीन क्यों नहीं मिली? हम लोग कोसी मुक्ति संघर्ष समिति के माध्यम से अपने वाजिब हक की लड़ाई लड़ रहे हैं और भविष्य में भी जब तक हमें इन्साफ़ नहीं मिलेगा इस लड़ाई को जारी रखेंगे। हमारी दिक्क़त सिर्फ़ एक ही जगह है कि जिनके दम पर हम यह लड़ाई लड़ना चाहते हैं उनमें से ज़्यादातर लोग अब यहाँ नहीं रहते और रोज़ी-रोटी की तलाश में बेवतन हो कर पूरे देश में फैले हुये हैं।"

रमेश चन्द्र झा (71)

वार्ड नं. 1 कोसी पुनर्वास, सुपौल

उधर कोशी पीड़ित विकास प्राधिकार के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ० अब्दुल ग़फ़ूर की अपनी अलग परेशानी है जो कि क्षमता सम्पन्न होने के बावजूद कुछ कर सकने की स्थिति में नहीं थे। देखें बॉक्स–मैं पहले तटबन्ध पीड़ित हूँ, प्राधिकार का अध्यक्ष बाद में...

...मैं पहले तटबन्ध पीड़ित हूँ, प्राधिकार का अध्यक्ष बाद में

पहले जो मूल डिजाइन के हिसाब से कोसी पर तटबन्ध बनने वाले थे उसके हिसाब से पूर्वी तटबन्ध धेमुरा धार तक था, बनगाँव के नज़दीक, और पश्चिमी तटबन्ध को झमटा से होकर गुज़रना था। इतना फ़ासला था दोनों के बीच और बना क्या? पूरब में महिषी भी तटबन्ध के बाहर और पश्चिम में भंथी और घोंघेपुर भी तटबन्ध के बाहर। कहाँ 18 किलोमीटर की डिज़ाइन की गई दूरी और कहाँ 8 किलोमीटर का वास्तविक फ़ासला। अब जो तटबन्धों के अन्दर फंसता है वह तो बरबाद होने के लिए ही वहाँ रहेगा, यह तो तटबन्ध बनते समय ही तय हो गया था। तब लीपापोती शुरू हुई घर के बदले घर, ज़मीन के बदले ज़मीन, घर पीछे एक आदमी को नौकरी, नाव का इन्तजाम, पुर्नवास में दो से 5 डेसिमल ज़मीन का प्लॉट। गड़बड़ यहीं से शुरू हुई।

जिसने भी पुनर्वास की योजना बनाई हो उसे पता ही नहीं था कि गाँव और शहर में कोई फ़र्क होता है। हम तो एक बार को रह लेंगे 5 डेसिमल में, मगर मुर्गी और बत्तख को कौन समझायेगा कि वह इधर-उधर न जायें। हमारी बकरी और गाय-बैल कहाँ चरेंगे? लोग टट्टी-पेशाब के लिए कहाँ जायेंगे? पुनर्वास से 7-8 किलोमीटर पर खेत हो गये जहाँ हल-बैल लेकर किसान जायेगा और उतना ही दूर रोज़ लौटेगा। खेत पर खाना पहुँचाने का काम औरतें या बच्चे करते हैं। वह भी रोज़ उतना ही चलेंगे। फिर पुनर्वास में पानी लग गया तो 90 फ़ीसदी लोग पुराने गाँव में वापस आ गये। बस हो गया पुनर्वास। इस पुनर्वास की ज़मीन की सरकार हर साल बन्दोबस्ती करती है खेती के लिए और पैसा अपने पास रख लेती है। लोग वापस अपने गाँव क्या चले गये कि सरकार ज़मीन्दार हो गई अब इसमें भी दलाल पैदा हो गये हैं। सालाना नीलामी में खेत ले लेते हैं और दूसरों को दे देते हैं।

मैं कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार का तीसरा अध्यक्ष हूँ। मुझसे पहले लहटन चौधरी और विनायक प्रसाद यादव इसके अध्यक्ष रह चुके हैं। किसी के समय में कोई काम नहीं हुआ। प्राधिकार को कोई राशि कहीं से नहीं मिली। लहटन चौधरी के ज़माने में 'कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार' नाम की एक पुस्तिका छपी थी जिसे आप ने देखा होगा। बस वही एक ख़र्चा हुआ है प्राधिकार के नाम पर।

विनायक बाबू के ज़माने में वह भी नहीं हुआ न ही मेरी अवधि में कुछ हुआ। शंकर प्रसाद टेकरीवाल यहीं सहरसा के रहने वाले हैं और जब वह वित्त मंत्री बने थे तब उन्होंने 5 करोड़ रुपया प्राधिकार के नाम स्वीकृत किया था जिससे कुछ काम हुआ होता मगर हमारे यहाँ पैसा खाते में जमा होने की प्रक्रिया इतनी घटिया और जटिल है कि वह पैसा स्वीकृत होने के बाद भी नहीं मिल पाया। बस उसके बाद फिर कुछ नहीं हुआ और न अब होगा।

एक समय था जब कोसी और उसके तटबन्ध की समस्या सबसे जुदा थी मगर तटबन्ध तो अब सभी छोटी-बड़ी नदियों पर बने हुये हैं और सभी के अन्दर लोग रहते हैं और सब को क़रीब-क़रीब एक जैसी मुसीबतें हर साल झेलनी पड़ती हैं तो फिर अब कोसी में वह पहले वाली ख़ासियत कहाँ बची है? अब अगर कोई पैसा तटबन्ध के अन्दर रहने वालों पर ख़र्च होगा तो वह सिर्फ़ कोसी वालों पर क्यों होगा? गंडक, बूढ़ी गंडक, बागमती, कमला या महानन्दा के बीच रहने वालों ने क्या गुनाह किया है कि वही सहूलियतें उनको नहीं मिलेगीं? अब अगर कोसी के अन्दर वालों पर कोई ख़र्च होता है तो सरकार के अन्दर ही बवाल खड़ा हो जायेगा। पहले थोड़ी बहुत उम्मीद थी मगर अब तो कुछ करने के लिए पैसा ही नहीं है। जब कहीं पैसा है ही नहीं तब किस बात के पीड़ित और किस बात का प्राधिकार?

कोसी तटबन्ध के अन्दर 80 पंचायतें हैं बीरपुर से लेकर कोपड़िया तक। घनी आबादी वाला इलाका है, एक पंचायत में 10,000 लोग भी हों तब भी 8 लाख लोग होते हैं। जाकर देख आइये किन हालात में लोग जीते हैं। मरने की दुआएं मांगते हैं पर मौत तो अपने हाथ में नहीं है। एक घर से दूसरे घर में जाने के लिए नाव चाहिये। पूजा करने या नमाज़ पढ़ने जाना हो तो नाव चाहिये, टट्टी-पेशाब के लिए नाव चाहिये। कभी बरसात में आकर हमारी हालत देख जाइये।

अब कोसी पीड़ितों की समस्या का कोई समाधान नहीं है सिवाय इसके कि बांध ख़त्म कर दिया जाये। अब यह काम नदी कर देती है तो बहुत अच्छी बात होगी वरना एक न एक दिन तटबन्धों के अन्दर रहने वाले लोग तंग आ कर यह काम ख़ुद करेंगे। दूसरी नदियों में तो यह हो भी रहा है जहाँ बरसात के मौसम में आये दिन तटबन्ध काटा जाता है। मैं यह बात कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार का अध्यक्ष होने के बावजूद पूरी जिम्मेवारी के साथ कह रहा हूँ। मैं पहले तटबन्ध पीड़ित हूँ और प्राधिकार का अध्यक्ष उसके बाद। कोसी तटबन्ध ही हमारी समस्या है और अब यही है उसका एकमात्र समाधान।"

डॉ. अब्दुल ग़फ़ूर (54)
ग्रा./पो. भेलाही, वाया महिषी, जिला सहरसा
(यह साक्षात्कार दिसम्बर 2004 में लिया गया था,
डॉ. ग़फ़ूर अब प्राधिकार के भूतपूर्व अध्यक्ष हैं।)

13. नेपाल में भी विस्थापित हुये 34 गाँव

कोसी तटबन्धों के बीच केवल भारत की ही ज़मीन नहीं पड़ती थी। बराज के नीचे नेपाल के सप्तरी जिले के 12 गाँव पड़ते थे और बराज के ऊपर तटबन्धों के बीच फँसे नेपाली गाँवों की संख्या 22 थी। रमपुरा, जि. सप्तरी के देव नारायण यादव बताते हैं कि, "...तटबन्ध के अन्दर पड़े गाँवों में जितने इलाके पर कोसी उस समय बहती थी और जो रिहायशी इलाका था उसका अधिग्रहण किया गया और उस ज़मीन का मुआवज़ा हमें दिया गया। जैसे लिलजा गाँव की कुल ज़मीन 1430 बीघा थी जिसमें से 317 बीघे का अधिग्रहण हुआ। बाकी ज़मीन वैसे ही रह गई। जब तटबन्ध और बराज बन गया और बराज से पानी छोड़ा गया तब बराज के ऊपर और नीचे दोनों तरफ़ कटाव शुरू हुआ। नदी की बहाव की दिशा बदलने लगी तब लिलजा की 1113 बीघा ज़मीन कट कर इधर-उधर होने लगी जिसका रैयत को कोई मुआवज़ा या भुगतान कभी नहीं मिला। यह कटाव बढ़ते-बढ़ते 61 गाँवों तक असर डालने लगा है। बराज के दक्षिण हमारी 3185 बीघा डुबान में है और उत्तर में 7093 बीघा, इस तरह कुल 10,278 बीघा ज़मीन ऐसी है जिसकी क़ीमत सरकार ने दे दी थी। 1100 बीघा ज़मीन बैरवा के उत्तर में भारत को गुडविल में मिली थी, इसका कुछ घटी दरों पर भुगतान हुआ था। इस तरह कुल 11,378 बीघे का भुगतान हम को हुआ। मगर हमारी ज़मीन तो बहुत ज़्यादा है और नदी जो है वह तो चारों तरफ़ घूमती ही है। इसलिए हमारी चिन्ता तो किसी न किसी को करनी ही पड़ेगी। हम लोगों की यह हालत तो इस तटबन्ध और बराज के कारण ही हुई है जो कि मूलतः भारत के हिस्सों की रक्षा के लिए बना था। ...पैसे की बात छोड़ भी दें तो पुर्नवास की हालत हमारे यहाँ बुरी है। अब नरहा वालों को पुनर्वास मिला भंटाबाड़ी में सो कोई गया नहीं क्योंकि वहाँ जीविका की कोई व्यवस्था नहीं थी। डलवा वाले पुनर्वास में पानी लगा है, वहाँ कैसे कोई रहेगा?"

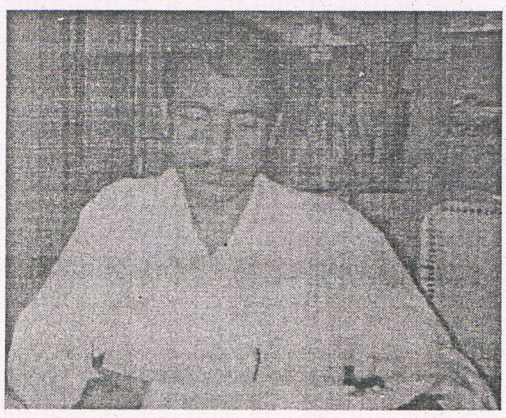

देव नारायण यादव

जहाँ नेपाल में पुनर्वास के नाम पर इतना विक्षोभ है वहीं भारत में जो भूमि अधिग्रहण हुआ इसके प्रति यहाँ भी अंसतोष था और उसके लिए नेपाल का उदाहरण दिया जाता था। "...नेपाल में जितने किसानों की ज़मीन अर्जित की गई तो हमारी सरकार ने ग्यारह

सौ रुपया प्रति बीघा कीमत दी है लेकिन उसकी कीमत यहाँ 250-300 रुपये प्रति बीघा दी गयी।"[29] वास्तव में नेपाल में पुनर्वास का मसला किसी भी मायने में कोसी के भारतीय क्षेत्र से भिन्न नहीं है। अन्तर केवल इतना है कि अगर नेपाली गाँवों में इस मुद्दे पर कोई असंतोष है तो उसकी अभिव्यक्ति काठमाण्डू के मार्फ़त ही भारत सरकार से हो सकती है। सीधी वार्ता या सीधे विक्षोभ प्रदर्शन के रास्ते ठीक उसी तरह से बन्द है जैसे बाढ़ या ऐसे किसी मुद्दे पर बिहार की जनता सीधे कुछ नहीं कर सकती। उसे पटना और दिल्ली के माध्यम से ही काठमाण्डू को कोई बात कहनी पड़ेगी। यही मजबूरी कभी-कभी आक्रोश का कारण बनती है।

14. प्रशासन, राजनीति और स्वयंसेवी संस्थाएं

तटबन्ध के बीच रह रहे इन लोगों को बाढ़ के समय सहरसा का जिला प्रशासन कई बार राहत पहुँचाने से इसलिए मना कर देता है कि इन लोगों का पुनर्वास किया जा चुका है और यह लोग ऐसी जगहों पर रह रहे हैं जहाँ इन्हें नहीं रहना चाहिये। प्रशासन इन लोगों को शायद राहत सामग्री पहुँचाता जरूर मगर इसके लिए उन्हें जल-जमाव वाले उस क्षेत्र में रहना जरूरी था जहाँ उन्हें पुनर्वास मिला हुआ था। यह कि इतने ज़्यादा बड़े इलाके में फैल कर बहने वाला पानी आज तटबन्धों के बीच रहने वालों की नियति बन चुका है इससे किसी को सरोकार नहीं है।

यहाँ यह बताना सामयिक होगा कि 1968 में एक बार बिहार विधान सभा में तटबन्धों के बीच रहने वालों की दुर्गति पर बहस चल रही थी। विनायक प्रसाद यादव ने सवाल किया था कि बेला धार के रुख़ परिवर्तन के कारण बेला, सिंगार मोती और धोबियाही गाँवों की हालत ख़राब हो गई है और यह गाँव कट जाने वाले हैं। वह जानना चाहते थे कि सरकार इन गाँवों की सुरक्षा के लिए क्या कर रही है। जबाव में **सरकार की तरफ से रामेश्वर प्रसाद सिंह ने उत्तर दिया कि, "यह गाँव दोनों कोशी नदी के तटबन्ध के भीतर हैं और बेला धार कोशी नदी की प्रशाखा है। जब पानी आता है तो गाँव को ख़तरा हो जाता है और कटाव होता है और इस कटाव के चलते सरकार का काम नहीं है कि गाँव को बचाये। गाँव वालों को पैसा मिल चुका है कि वह हट जाएँ। ज़मीन वह केवल खेती के लिए है, रहने के लिए नहीं। गाँव बचाने के लिए सरकार पैसा ख़र्च नहीं करती है।"**[30] यह सरकार का एक नीति वाक्य था जो कि अभी तक कायम है। इसका सीधा मतलब है कि किसी भी नदी के तटबन्धों के बीच में रह रहे लोगों के प्रति सरकार खेती और फ़सल की सुरक्षा सहित सभी दायित्वों से अपने आप को पूरी तरह मुक्त मानती है **क्योंकि नदी को किस तरह समझाया जायेगा कि ग्रामीणों को घरों का मुआवज़ा मिल चुका है और वह उन्हें काट सकती है और वह खेतों**

को छोड़ दे क्योंकि उसका मुआवज़ा लोगों को नहीं मिला है। अगर तटबन्ध सुरक्षित रहते हैं तो उनके बीच रहने वाले लोगों का जीवन असुरक्षित होता है। लेकिन जल-संसाधन विभाग का काम है तटबन्धों को सुरक्षित रखना और इस फ़र्ज़ को भी कहाँ तक अंजाम दिया जाता है वह सभी लोग अच्छी तरह जानते हैं।

15. अब तटबन्धों पर बुल-डोज़र

जल संसाधन विभाग का यह भी कहना है तटबन्धों पर लोग बसे हुये हैं और बरसात तथा बाढ़ के मौसम में लोग आस-पास के इलाकों से आकर भी बस जाते हैं। ऐसे समय में तटबन्धों के रख-रखाव के लिए गाड़ियों की आवा-जाही में बाधा पड़ती है और रख-रखाव ठीक से नहीं हो पाता है जिसके कारण तटबन्ध टूट जाते हैं। तटबन्ध टूटने के बाद मरम्मत के कामों में भी तटबन्धों पर लोगों के रहने के कारण बाधा पहुँचती है। सरकार ने इन लोगों को हटाने के लिये नोटिस दिया हुआ है मगर यह लोग हटते नहीं हैं। इंजीनियरों का यह भी मानना है कि इसके पीछे राजनैतिक इच्छा शक्ति का अभाव है। तटबन्धों पर रहने वाले अधिकांश लोग समाज के कमजोर वर्गों के ग़रीब लोग हैं और राजनैतिक दृष्टि से बहुत उपयोगी हैं। सरकार और राजनैतिक पार्टियाँ इनसे झगड़ा मोल नहीं ले सकतीं। तटबन्धों पर रहने वाले लोग केवल विस्थापित ही नहीं हैं, मतदाता भी हैं। यह बात सभी जानते हैं। एक पार्टी की सरकार अगर उन्हें उजाड़ेगी तो दूसरी पार्टी उसका फ़ायदा उठायेगी। ऐसा ख़तरा ज्ञान प्राप्ति के पहले के कालिदास ही उठा सकते हैं। इसी तरह सिविल एस. डी. ओ. से लेकर कमिश्नर तक हर अधिकारी के पास ऐसे लोगों की सूची है जो तटबन्ध पर गैर-कानूनी दख़ल जमाये हुये हैं मगर कोई भी कुछ कर सकने की स्थिति में नहीं है। इन लोगों को हटाने के लिये दिसम्बर 2002 तक की समय सीमा थी मगर कुछ नहीं हुआ? इंजीनियर लोग भी नहीं चाहते हैं कि इन लोगों के साथ कोई ज़ोर-ज़बरदस्ती हो या कोई केस-मुकद्दमा हो क्योंकि तटबन्ध पर जूनियर से लेकर चीफ़ इंजीनियर तक हरेक को गुज़रना पड़ता है और इन सबके लिए कोई सुरक्षा व्यवस्था भी नहीं होती। तटबन्धों से हटाये जाने वाले लोगों का गुस्सा तो इंजीनियरों पर ही निकलना है।

दर असल 1997-98 में मधुबनी जिले में कमला और कोसी पर बने तटबन्धों पर से तथा-कथित अवैध दख़ल को हटाने की एक मुहिम जिला प्रशासन की ओर से चलाई गई। डंडे के जोर पर इन लोगों को खदेड़ तो दिया गया मगर यह लोग उजड़ने के बाद कहाँ जायेंगे इसके बारे में न तो उजड़ने वालों को पता था और न उजाड़ने वालों को इसकी परवाह थी। उजाड़ने वालों को तो राज्यादेश मिला हुआ था ऐसा करने के लिए। उजड़ने वाले तो पहले ही से कहीं न कहीं से उजड़ कर ही आये थे। अगर वह तटबन्धों के अन्दर के रहने वाले हों तो बहुत मुमकिन है उनके गाँव कट गये हों, घर बचे रहने

का ऐसी हालत में सवाल ही नहीं उठता, इसलिए चले आये हों तटबन्ध पर रहने के लिए। दूसरा यह कि सरकार और कोसी या कमला प्रोजेक्ट की कृपा से उनके गाँव-घर, खेत-पथार पर पानी लग गया हो और वह हटने पर मजबूर हुये हों। यह भी मुमकिन है कि उनका गाँव-घर किसी टूटते तटबन्ध के मुहाने पर पड़ गया हो, वह इसलिए वहाँ तटबन्ध पर थे। **तटबन्ध पर जो भी लोग तब रह रहे थे या आज भी हैं उनमें से एक भी परिवार वहाँ अपने शौक से या पिकनिक मनाने के लिये नहीं है। उनमें शायद ही कोई शख़्स ऐसा होगा जिसका उसके चारों तरफ़ पानी से घिरा होने पर दिल बहलता हो। वहाँ जो भी है वह अपने घर-द्वार से बेदख़ल होने के दर्द और मजबूरी के साथ रह रहा है। कमला और कोसी नदियों के बीच रहने वालों पर तो यह बात ख़ास तौर पर लागू होती है।** इन सारे कारणों को बला-ए-ताक पर रख कर सत्ता के दम्भ पर सरकार ने उन्हें उजाड़ दिया। दबे हुये को और ज़्यादा दबाने का काम उसी सरकार ने किया जिसे कभी वोट देकर खुद इन लोगों ने ही सर आँखों पर बिठाया होगा।

यह सच है कि तटबन्धों की मरम्मत और रख-रखाव के लिए यह जरूरी है कि वहाँ किसी तरह की रुकावट या अड़चन न पड़े मगर इसके साथ यह भी उतना ही जरूरी है कि सरकार उन लोगों को यह बताये कि उन्हें कहाँ रहना चाहिये। इनमें से अधिकांश के तटबन्धों पर रहने की जिम्मेवार सरकार खुद है और वह अपनी इस जिम्मेवारी से आँखें नहीं मूँद सकती। मधुबनी जिले में जब लोग तटबन्धों से उजाड़े गये तब उनके पास रहने सहने के लिये कोई जगह ही नहीं बची। रातों-रात तटबन्धों के आस-पास की ऊँची ज़मीनों के भाव आसमान चढ़ गये और लम्बे अरसे तक बहुत से परिवारों को खेतों की मेंड़ पर रहना पड़ा क्योंकि पानी के बाहर पास में वही एक सार्वजिनिक जगह उपलबध थी।

तटबन्धों के अन्दर फंसे लोगों के यह सब मसले किसी भी राजनैतिक पार्टी के एजेन्डा में नहीं है और जो कुछ थोड़ी बहुत स्वयं सेवी संस्थाएं उस इलाके में काम कर रही हैं उनमें से अधिकांश कुछ राहत सामग्री बांट कर अपने कर्तव्य की इति श्री कर लेती हैं। बाढ़ और जल-जमाव का मसला उनके कार्य क्षेत्र में जरूर आता है मगर तटबन्धों के भीतर रहने वालों की समस्या का स्थायी या किसी भी तरह का समाधान खोजना उनके एजेण्डा में नहीं है। उनका स्वार्थ इसी में है कि कहीं से उन्हें पैसा मिलता रहे और वह राहत कार्य चलाते रहें या फिर कभी पर्यावरण के नाम पर, कभी लोकाधिकारों के नाम पर या कभी जीविकोपार्जन के नाम पर सभा-सेमिनार करते रहें। प्रशासनिक, राजनैतिक और तकनीकी तंत्र के छल-कपट, प्रपंच, धोखाधड़ी और वायदा ख़िलाफ़ी की ओर से जान-बूझ कर आंखें बन्द रखने वाली ज़्यादातर यह संस्थाएँ अपनी दाता संस्थाओं के अधिकारियों और पर्यवेक्षकों के सामने बाढ़ पूर्व तैयारी, आपदा प्रबन्धन, राहत कार्य, सशक्तिकरण और बाढ़ सह-जीवन आदि शब्दों का ज़ोर-ज़ोर से मंत्र-जाप ठीक उसी तरह से करती है जैसे

कि गाँवों में प्राइमरी स्कूलों के बच्चे छुट्टी के पहले मास्टर साहब के सामने जोर-जोर से 'दो का दो, दो दुनी चार, दो तियाईं छः' चिल्लाते हैं। ऐसा होने पर मास्टर साहब भी खुश रहते हैं कि बच्चों को पहाड़े याद हैं और बच्चों का भी मनोबल ऊँचा रहता है। वास्तविक समस्याओं से दूर-दूर भागना इस तरह की बहुत सी संस्थाओं की व्यावहारिक त्रासदी है।

रामचन्द्र खान (ग्राम मुसहरिया, थाना जमालपुर, जिला दरभंगा) अफ़सोस करते हैं कि, "...यह कैसा विज्ञान है जो परिणामों के प्रति चिंता नहीं करता है। समस्या का समाधान करने के बजाय वह उसका एक स्थान से दूसरे स्थान तक विस्थापन करता है। विज्ञान किसी भी स्थान विशेष की संस्कृति के बारे में कोई जानकारी क्यों नहीं लेता? अगर मरुभूमि की अपनी जीवन शैली है तो क्या बाढ़ क्षेत्र पर वही मान्यताएं लागू होंगी? हमलोग यहाँ बाढ़ की प्रतीक्षा करते थे। हमारी कृषि उत्पादन की सारी प्रक्रिया नदी और बाढ़ से जुड़ी हुई थी। जितना गहरा पानी होता था उसी के अनुरूप लोग धान की किस्में बोते थे। ताज़ी मिट्टी और नदी के पानी के संयोग से रबी की जबरदस्त फ़सल होती थी। मछलियों की कोई कमी नहीं थी। नावों व नदियों के माध्यम से संचार व्यवस्था कायम रहती थी। दुर्गा पूजा के ढोल की आवाज़ के साथ एक तरह से बाढ़ की समाप्ति की घोषणा होती थी। विज्ञान के दुरुपयोग के कारण हमारी सारी नदियाँ हम से छिन गईं। हमारे खेत, हमारी खेती-बाड़ी, रहन-सहन, फूल-पत्ते, पशु-पक्षी, मंदिर-मस्ज़िद और हमारी संस्कृति सब की सब इन तटबन्धों की वज़ह से हमारे हाथ से निकल गईं। हमारे यहाँ पानी 8 महीनें रहता है और इसके पहले कि पिछली बाढ़ का पानी सूखे, अगले साल का पानी दरवाज़े पर दस्तक देने लगता है। पहले कोसी अपनी दसियों धाराओं में बहती थी और बाढ़ का लेवेल कभी भी इतना नहीं चढ़ता था। धान की हमारी परम्परागत किस्में थीं जो कि इस इलाके में होती थीं। कोसी और कमला का पानी एक दूसरे से मिल कर ज़मीन को बेहद उपजाऊ बना देता था। वह सब चला गया। **हमारी समस्या का अब एक ही समाधान है कि हमारी नदियों को हमें बिना**

रामचन्द्र खान

किसी शर्त उनके मूल स्वरूप में हमें वापस कर दिया जाये। हम न तो तटबन्ध तोड़ने की बात करते हैं और न बराहक्षेत्र बांध की बात करते हैं। बस हमारी नदी हमें वापस दे दीजिये। बाकी हम समझ लेंगे।''

अपनी तकलीफ़ को बड़ी बेबाकी से बताते हैं कबिरा धाप के दीना नाथ पटेल (प्रखण्ड सलखुआ, जिला-सहरसा) कहते हैं, ''आप मुझ से पूछ रहे हैं कि अगर भगवान मेरे सामने आकर खड़े हों तो मैं उनसे क्या मांगूगा? आप को दिखाई नहीं पड़ता है कि मेरा गाँव, मेरा घर मेरी आँख के सामने कट रहा है? **और आप क्या सोचते हैं भगवान कभी हमारे पास आया नहीं? यहाँ जो भी आता है भगवान बन कर ही आता है। वह विधिवत हमको धोखा देता है और फिर खिसक लेता है। हो सकता है आप भी वही हों। आप हम को और हमारी तकलीफ़ों को कहाँ-कहाँ ले जा कर बेच देंगे, हमें पता भी नहीं लगेगा। हम तो भगवान से कहेंगे कि पहले आप साबित कीजिये कि आप भगवान है तब उसके बाद आगे की बात होगी।**''

चार बार बिहार विधान सभा के सदस्य रहे परमेश्वर कुअँर (75) बताते हैं कि, ''मुझे डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को काला झण्डा दिखाने के इल्जाम में 1955 में उस वक़्त गिरफ़्तार किया गया था जब वह पूर्वी कोसी तटबन्ध का शिलान्यास करने के लिए सहरसा आये हुये थे। राजेन्द्र बाबू मुझे जानते थे और उनको जब इस बात का पता लगा तो उन्हीं के कहने पर जेल से मेरी रिहाई भी हुई। कुमार कौशलेन्द्र सिंह ने कोसी तटबन्धों के बीच पड़ने वाले सारे लोगों की एक विवरणी तैयार की थी और हम लोगों ने इन कोसी पीड़ितों की ओर से आवाजें उठाईं। यह सारे कागज़ात मेरे पास एमरजेन्सी तक थे मगर मेरा पूरा संकलन और लाइब्रेरी पुलिस ले गई जो कि मुझे कभी वापस नहीं मिला। हम लोगों ने एक 20 पेज का स्मार-पत्र श्रीकृष्ण सिंह, मुख्यमंत्री, बिहार को दिया था। उसका जवाब टी० पी० सिंह के यहाँ से अंग्रेज़ी में लिख कर आया। तब हम लोगों ने 15-20 हजार लोगों को लेकर सहरसा में प्रदर्शन किया और कई बार जेल गये। सूरज नारायण सिंह, बसावन सिंह, रामानन्द तिवारी, कर्पूरी ठाकुर और बहादुर खान शर्मा वग़ैरह कोसी तटबन्धों के द्वारा लोगों पर हुई नाइन्साफ़ी के ख़िलाफ़

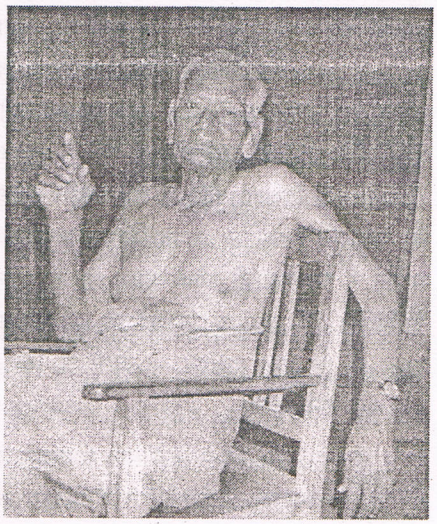

परमेश्वर कुँअर

कितनी बार धरने पर बैठे। ...लेकिन आप ऐसी सरकार से नहीं लड़ सकते जिसने कोई काम किसी भी कीमत पर कर ही डालने की क़सम खा रखी हो और जिसके पास किसी भी आन्दोलन को कुचल देने के लिए सारी ताकत है। मैं तो अब बूढ़ा हो गया हूँ और अब पहले जैसा दम-ख़म मुझ में नहीं है मगर मुझे अभी भी लगता है कि कोसी के तटबन्धों को सूखे के मौसम में पूरा ध्वस्त कर देना चाहिये। ऐसा करने से तटबन्ध के टूटने से होने वाला नुकसान भी नहीं होगा और नदी अगर पूर्णियाँ चली जाती है तो चली जाये। वैसे भी वह एक न एक दिन वहाँ तटबन्ध तोड़ कर पहुँच ही जायेगी।''

16. अभी लड़ाई जारी है

पुराने नेताओं जैसे बैद्यनाथ मेहता, जानकी नन्दन सिंह, कौशलेन्द्र नारायण सिंह, जयदेव सलहैता, परमेश्वर कुँअर (अभी कुछ माह पहले उनका देहावसान हुआ), बौकू महतो, खुशीलाल कामत और बहादुर खान शर्मा अब हमारे बीच नहीं हैं पर कोसी तटबन्ध पीड़ितों की तकलीफ़ों को उजागर करने वाले लोग अभी हमारे बीच समाप्त नहीं हुये। 1984 में नवहट्टा में जो पूर्वी कोसी तटबन्ध टूट गया था जिसकी वजह से सहरसा/सुपौल की कोई 4.5 लाख आबादी सड़क पर आ गई थी और लगभग 70,000 हेक्टेयर भूमि जलमग्न हो गई थी तक सर्वोदय के श्री शिवानन्द भाई का जन-संघर्ष लम्बे समय तक याद किया जाता रहेगा।

नई पीढ़ी के कार्यकर्ताओं में कोसी मुक्ति संघर्ष समिति, सुपौल के ऐडवोकेट देव कुमार सिंह (ग्राम ढोली, प्रखण्ड भपटियाही, सरायगढ़, जिला सुपौल) ने पिछले कोई 15 वर्षों से इस समस्या को विभिन्न स्तरों पर, बिहार के मुख्य सचिव से लेकर राष्ट्रपति तक, उठाया है। उन्होंने सुपौल और पटना से लेकर दिल्ली तक कितनी बार गोष्ठियों, धरनों और प्रदर्शन का आयोजन किया है और समस्या को पारिभाषित करने और कोसी तटबन्धों के बीच फँसे लोगों की दु:स्थिति के बारे में ज्ञापन दिया है। जब इन सारी कोशिशों का कोई परिणाम नहीं निकला तब हार कर उन्होंने राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को 30 मई 1998 को दख़ल देने के लिए आवेदन दिया। अपनी 15 सूत्री मांगों में कोसी मुक्ति संघर्ष समिति, सुपौल ने तटबन्धों के भीतर पड़ने वाली ज़मीन का सरकार से मुआवज़ा मांगा और इस ज़मीन पर अब तक के फ़सलों के हुये नुकसान की क्षतिपूर्ति मांगी। निर्मली-भपटियाही खण्ड में रेल सेवा पुन: बहाल करने के साथ-साथ बराहक्षेत्र में कोसी पर हाई डैम की मांग भी उन्होंने रखी।

इन मुख्य मांगों के साथ साथ कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार के प्रावधानों को लागू करना, तटबन्धों के बीच फँसे लोगों को सरकारी नौकरियों में आरक्षण, तटबन्ध-पीड़ितों का पुनर्वास, उनके लिए सुरक्षित क्षेत्र में पक्के मकान, हर तरह के सरकारी कर्ज़ की

ऐडवोकेट देव कुमार सिंह

माफ़ी, घाट बन्दोबस्ती को पूरी तरह समाप्त करना, कोसी पीड़ितों के नाम पर नौकरियों में हुई नियुक्ति में धांधली की जांच, आई०टी०आई० में तटबन्ध पीड़ित छात्रों के लिए आरक्षण, पुनर्वास स्थलों पर अवैध दख़ल की समाप्ति, तटबन्धों के अन्दर की ज़मीन का नये सिरे से मालिकाना हक के लिए सर्वेक्षण के साथ-साथ इलाके में बड़े उद्योगों की स्थापना की बात कही गई है ताकि लोगों को रोज़गार मिल सके।

मानवाधिकार आयोग ने अपने पत्र संख्या 2294/4/97-98, दिनांक 12 अगस्त 1998 की मार्फ़त बिहार के मुख्य सचिव से इन मांगों पर जवाब मांगा। आयोग को कोई सूचना नहीं मिलने पर उसने अपने पत्र संख्या 746/4/98-99 के माध्यम से बिहार सरकार से 22 मार्च 1999 के पहले अपनी स्थिति स्पष्ट करने का आदेश दिया। इस पत्र का जवाब बिहार सरकार ने पत्र संख्या 3/एच आर सी 1088/99 गृ. आ.-10078 दिनांक 11 अक्टूबर 2001 को दिया। पुनर्वास के प्रश्न का उत्तर देते हुये बिहार सरकार ने कहा कि, ''...तटबन्धों के बीच जो लोग रहते थे उनका पुनर्वास 1957 में अनुमोदित पुनर्वास योजना के तहत कर दिया गया है। बरसात के और बाढ़ के मौसम के बाद कृषि, मत्स्य पालन और दूसरे आर्थिक क्रियाकलाप बहुत आकर्षक हो जाते हैं तब पुनर्वासित लोग अपनी मर्ज़ी से तटबन्धों के अन्दर या बाहर रहते हैं और कोसी तटबन्धों के बीच की अपनी खादिर की ज़मीन तथा दूसरे आर्थिक अवसरों का लाभ उठाते हैं।'' 1957 की अनुमोदित पुनर्वास योजना वही 2.12 करोड़ वाली योजना है जिसका ज़िक्र हमने इसी अध्याय के खण्ड 8.7 में किया है। बिहार सरकार द्वारा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग को दिये गये उत्तर में प्रस्तावित बराहक्षेत्र बांध के बारे में कहा गया है कि ''...भारत सरकार और नेपाल सरकार के बीच कोई समझौता हो जाने के बाद ही (कोसी हाई) डैम के निर्माण की दिशा में कोई प्रगति हो सकेगी। जब यह बांध बन जायेगा तब नदी का प्रवाह पूरी तरह स्थिर हो जायेगा और गाद का जमा होना कोई बड़ी समस्या नहीं रह जायेगी।''

प्रत्युत्तर में यह स्पष्ट किया गया है कि, ''...इस कथित (पुनर्वास) योजना में 136 पुनर्वास स्थलों का विकास किया गया और गृह निर्माण के अनुदान के रूप में 1.17 करोड़ रुपये खर्च किये गये। जन-सुविधाओं के लिए 1.10 करोड़ रुपयों का भुगतान किया गया। इस तरह से इस योजना के तहत जितनी राशि का प्रावधान था उससे ज्यादा राशि पुनर्वास पर ख़र्च की गई और 39,527 परिवारों का पुनर्वास किया गया।'' रिपोर्ट में आगे कहा

गया है कि प्रभावित परिवारों द्वारा पुनर्वास स्थल का उपयोग वर्ष में कुछ समय के लिए एक वैकल्पिक निवास के रूप में होता है। लोग अपने पुराने घर छोड़ने के लिए राज़ी नहीं हैं। जिसकी वजह से पुनर्वास स्थलों पर 1400 एकड़ ज़मीन अभी भी खाली पड़ी हुई है। इन प्लॉटों की सालाना बन्दोबस्ती कर दी जाती है ताकि उन्हें (प्रभावित लोगों को-लेखक) ज्यादा-से-ज्यादा फ़ायदा पहुँच सके। ज्यादातर लोगों का पुनर्वास स्थल और अपने पुराने गाँव के बीच आना-जाना लगा रहता है जिसकी वजह से ऐसे बाहरी लोगों को उनकी पुनर्वास की ज़मीन को दख़ल करने का मौका मिल जाता है जो कि पुनर्वासितों की वास्तविक सूची में नहीं थे।'' सरकार का आश्वासन है कि ऐसे अनाधिकारी लोगों की पहचान की जा रही है और गैर-कानूनी दख़ल करने वालों को वहाँ से हटाया जायेगा। इस काम के लिए जिला प्रशासन की मदद ली जा रही है। रिपोर्ट यह भी कहती है कि 81 कर्मचारियों के विरुद्ध जाँच जारी है और उनमें से 31 ऐसे कर्मचारियों को, जिनको ग़लत तरीके से नौकरी मिल गई थी, मुअत्तल कर दिया गया है।[31]

कोसी मुक्ति संघर्ष समिति की बाकी मांगों के लिए राज्य के जल संसाधन विभाग का मानना है कि यह मांगें उनके विभाग से सम्बद्ध नहीं है अतः वह कुछ कह सकने की स्थिति में नहीं है। सवाल इस बात का है कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने यह पत्र राज्य के मुख्य सचिव को लिखा था, जल-संसाधन विभाग को नहीं। मुख्य सचिव का यह दायित्व बनता था कि वह बाकी सवालों का जवाब भी सम्बद्ध विभागों से लेकर आयोग के सामने अपनी स्थिति स्पष्ट करते मगर ऐसा अभी तक नहीं हुआ है।

तालिका 2 में हम उन गाँवों की सूची दे रहे हैं जिनमें कोसी परियोजना के विस्थापितों को पुनर्वास दिया गया था। इस सूची में बिहार के जल संसाधन विभाग द्वारा मानवाधिकार आयोग, दिल्ली को दी गई एक सूचना में ऐसे पुनर्वास स्थलों की संख्या 136 बताई गई है। मगर पुनर्वासित होने वाले गाँवों की सूची मानवाधिकार आयोग को नहीं दी गई है और न ही इस बात के कोई स्पष्ट विवरण कहीं उपलब्ध हैं कि किस पुनर्वास स्थल पर किस-किस गाँव को पुनर्वास दिया गया है। रमेश झा के अनुसार इस तरह की सूची मिल भी नहीं पायेगी क्योंकि पुनर्वास स्थलों में रहने वालों का शायद ही कोई रिकार्ड हो। सुपौल में स्थित कोसी परियोजना के पुनर्वास कार्यालय से वहाँ कार्यरत दस अमीनों की सूची जरूर जारी की गई है जिनके अधीन, विभिन्न पुनर्वास स्थल आते हैं इस सूची के अनुसार परियोजना में पुनर्वास स्थलों की संख्या 134 है जिनमें से 60 पुनर्वास स्थल कोसी के तटबन्ध के पूरब और 74 पुनर्वास स्थल कोसी के पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में हैं। इन पुनर्वास स्थलों पर कोई 1400 एकड़ ज़मीन (लगभग 570 हेक्टेयर) खाली पड़ी हुई है जबकि पुनर्वास के लिए कुल कोई 1200 हेक्टेयर (लगभग 3,000 एकड़) ज़मीन का अधिग्रहण किया गया था। इसका सीधा-सीधा मतलब यह है कि सरकार की अपनी स्वीकारोक्ति के

अनुसार लगभग आधा पुनर्वास खाली है। इसके अलावा जिन पुनर्वास स्थलों में खाली ज़मीन का ब्यौरा दिया हुआ है उनकी संख्या 110 (पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में 58 तथा पूर्वी तटबन्ध के पूरब में 52) है। पुनर्वास स्थलों की सूची में पूर्वी तटबन्ध के पूरब के गाँव नाकुच को इसी नाम से दिखाया गया है (कॉलम 2) लेकिन तालिका 2 में जब पुनर्वास स्थलों में खाली जगहों को दिखाया गया है तब वहाँ नाकुच-क और नाकुच-ख नाम से दो जगहें दर्ज हैं। इस तरह से कॉलम 4 में नाकुच-क और नाकुच-ख को एक ही पुनर्वास मानने पर आंशिक रूप से खाली पुनर्वास स्थल वाले गाँवों की संख्या 109 हो जाती है। अगर पुनर्वास विभाग द्वारा मुहय्या की गई कॉलम 2 तथा 3 की सूचनाएँ और जल संसाधन विभाग द्वारा मानवाधिकार आयोग को दी गई कॉलम 4 की सूचनाएं सही हैं तो 25 पुनर्वास स्थल ऐसे हैं जहाँ खाली ज़मीन के बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है। इसका मतलब जो समझ में आता है वह यह कि कम से कम 25 पुनर्वास स्थल ऐसे होने चाहिये जहाँ विस्थापित लोग पूरी-पूरी तरह से आबाद हैं। हमने इन 25 गाँवों को तालिका 2 में तारांकित किया है।

तालिका 2

उन स्थलों का विवरण जहाँ कोसी तटबन्ध पीड़ितों को पुनर्वास दिया गया।

क्र. सं.	पुनर्वास स्थल	पुनर्वास की कुल ज़मीन हेक्टेयर	पुनर्वास की कुल खाली ज़मीन-हेक्टेयर
1.	भीम नगर*	3.39	--
2.	साहेबान	9.51	0.4
3.	पिपराही बैजनाथपुर	8.14	2.43
4.	बैजनाथपुर	0.93	0.3
5.	बसावन पट्टी	12.47	3.04
6.	पिपराही गोठ/लालमन पट्टी	2.88	1.42
7.	नरपत पट्टी/सातन पट्टी	7.37	2.43
8.	नरपत पट्टी/ गोपालपुर	5.8	2.43
9.	कोढ़ली गोपालपुर	8.55	0.4
10.	नोनपार	13.36	2.43
11.	सदानन्दपुर/कल्याणपुर	7.78	1.62
12.	बिसनपुर/भपटियाही	10.4	3.24
13.	पिपरा खुर्द/भपटियाही	8.5	1.21
14.	चाँदपीपर उत्तर*	4.6	--
15.	चाँदपीपर दक्षिण*	7.95	--

क्र. सं.	पुनर्वास स्थल	पुनर्वास की कुल ज़मीन हेक्टेयर	पुनर्वास की कुल खाली ज़मीन-हेक्टेयर
16.	मलाढ़	15.14	7.29
17.	थरबिट्टा पूरब	15.35	10.47
18.	थरबिट्टा कॉलोनी	7.59	3.59
19.	किशनपुर	12.67	7.29
20.	अभुआर खखई	8.7	1.16
21.	डभारी*	4	--
22.	महुआ*	8.43	--
23.	बैरिया मंच	5.69	2.67
24.	खरैल मलहद	45.26	0.58
25.	खरैल परसा कर्णपुर	37	5.9
26.	पिपरा खुर्द	7.3	0.61
27.	परसा	6.03	3.88
28.	सिमरा मल्हनी	7.22	1.42
29.	लालचन्द पट्टी/रामदत्त पट्टी	4.94	3.55
30.	नेमुआ रामपुर*	8.58	--
31.	बसबिट्टी	4.89	0.53
32.	डुमरिया	19.64	1.21
33.	बराही बिजलपुर	38.89	19.43
34.	डुमरा	16.04	2.43
35.	धर्मपुर त्रिखुट्टी/चौखुट्टी	14.79	8.91
36.	धर्मपुर त्रिखुट्टी/	18.85	4.86
37.	नवहट्टा हेमपुर	19.35	6.07
38.	नवहट्टा नौलक्खा	6.68	4.05
39.	नवहट्टा साहपुर	12.47	0.95
40.	कुम्हरौली*	10.19	--
41.	मोहनपुर*	15.25	--
42.	औरिया रमौती	4.94	3.24
43.	एनायतपुर	5.07	0.81
44.	चन्द्राइन	41.31	16.19
45.	खिरहो तेघरा	7.34	2.43
46.	महिषी उत्तरवारी	9.85	3.64
47.	महिषी टीलाभाग*	2.58	--

क्र. सं.	पुनर्वास स्थल	पुनर्वास की कुल ज़मीन हेक्टेयर	पुनर्वास की कुल खाली ज़मीन-हेक्टेयर
48.	महिषी जामुनबाड़ी	13.37	3.64
49.	महिषी महपुरा	1.82	1.62
50.	गमरहो	12.91	7.29
51.	नाकुच (क) और (ख)	7.64	4.45
52.	तिलाठी	11.28	11.28
53.	सतरस	29.04	9.31
54.	कठघरा	12.67	2.43
55.	गोरदह	16.45	12.51
56.	भेलवा	8.18	6.88
57.	उटेसरा (अन्दर)	1.72	1.72
58.	सलखुआ सितुआही	5.43	4.26
59.	सलखुआ	8.95	7.84
60.	उटेसरा (बाहरी)	13.81	6.07
61.	कुनौली (उत्तर)	1.83	1.38
62.	कुनौली (दक्षिण)	6.3	1.78
63.	हरिपुर	2.46	0.87
64.	हरिपुर कमलपुर	10	1.57
65.	कमलपुर	3.04	1.34
66.	जिरोगा महादेव मठ	6.33	6.19
67.	जिरोगा (बी)	3.7	3.48
68.	कुलहड़िया	4.21	3.64
69.	धरहारा 'क'*	1.85	--
70.	धरहारा 'ख'*	8.9	--
71.	डगमारा*	12.38	--
72.	मथही	3.98	3.74
73.	महादेव मठ बेलही गिदराही	2.01	0.61
74.	बरुआर राजाराम पट्टी	4.89	4.86
75.	नेमुआ बरुआर	8.72	7.1
76.	औराहा महदेवा	8.03	6.52
77.	जिरोगा नरेन्द्रपुर	9.9	7.94
78.	छजना बलुआहा	4.89	1.01
79.	छजना झिटकी	2.87	2.24

क्र. सं.	पुनर्वास स्थल	पुनर्वास की कुल ज़मीन हेक्टेयर	पुनर्वास की कुल खाली ज़मीन-हेक्टेयर
80.	छजना लछमिनियाँ	2.31	1.62
81.	निर्मली लछमिनियाँ*	9.45	--
82.	बेलही पुला	2.24	2.06
83.	बेलही परसा	11.1	4.35
84.	बेलहा ब्रह्मपुर	10.54	8.1
85.	इनरवा*	2.79	--
86.	रजुआही पिरोजगढ़	21.6	16.76
87.	मटरस	10.22	0.57
88.	बिरौल	2.08	2.08
89.	पौनी चपराम	19.8	11.54
90.	अज रक्बे पौनी	4.95	4.85
91	मरौना अगरगढ़ा उत्तर	12.47	5.92
92.	मरौना अगरगढ़ा दक्षिण	--	5.04
93.	मरौना सरौनी उत्तर	11.58	9.28
94.	मरौना सरौनी दक्षिण	5.92	4.45
95.	बनगामा पिपराही	11.22	4.05
96	कालिकापुर	4.68	4.54
97.	डेवढ़*	1.02	--
98.	तरडीहा बोचही	2.99	0.81
99.	सरौनी उत्तर	9.08	8.1
100.	सरौनी दक्षिण	9.22	9.09
101.	भूमपुर	9.17	8.1
102.	नवादा	5.42	5.36
103.	भखराइन*	7.6	--
104.	भखराइन रतुआर रहुआ	14.51[1]	21.01
105.	खरीक मधुसंग्राम	4.74	4.36
106.	भेजा*	0.73	--
107.	झगरुआ उत्तर	6.74	3.31
108.	तरवारा कुबौल	5.3	3.25
109.	बलथी खजुरी परसौनी	22.13	17
110.	रसियारी परवलपुर	6.1	5.83
111.	रसियारी कल्याण*	4.42	--

क्र. सं.	पुनर्वास स्थल	पुनर्वास की कुल ज़मीन हेक्टेयर	पुनर्वास की कुल खाली ज़मीन-हेक्टेयर
112.	रसियारी बकुनिया	8.2	2.02
113.	झगरुआ दक्षिण	14.4	8.12
114.	तेतरी पूरब*	1.59	--
115.	तेतरी मध्य*	0.98	--
116.	तेतरी पश्चिम डंका	2.44	2.44
117.	तेतरी जक्सो भुबौल	18.4	14.68
118.	भुबौल*	&&	--
119.	जमालपुर उत्तर	6.05	2.45
120.	जमालपुर दक्षिण	9.92	5.5
121.	अखतवारा उत्तर	4.65	3.85
122.	अखतवारा दक्षिण	4.2	2.83
123.	अमाही खैसा*	2.83	--
124.	अमाही उत्तर*	4.24	--
125.	अमाही दक्षिण	3.07	3.07
126.	बहरामपुर	8.7	6.48
127.	पुनाच गन्डौल	12.06	8.82
128.	मल्लै गरौल बघवा	2.39	2.39
129.	जल्लै पूरब	12.34	8.5
130.	जल्लै मध्य	4.08	1.55
131.	जल्लै पश्चिम	36.85	23.77
132.	तरवाड़ा*	0.68	--
133.	ब्रह्मपुर*	3.36	--
134.	घोंघेपुर सहरवा	25.37	21.18
	योग लगभग	1229.67[2]	554.29

स्त्रोत : (i) कॉलम 2-3, पुनर्वास कार्यालय, कोसी परियोजना, सुपौल

(ii) कॉलम 4, जल संसाधन विभाग, बिहार द्वारा मानवाधिकार आयोग, नई दिल्ली को दी गई सूचना (2001)

* वह गाँव जहाँ पुनर्वास स्थल की ज़मीन के बारे में कुछ नहीं कहा गया है, अतः यह पुनर्वास पूरी तरह से आबाद होने चाहिये।

1. यह रकबा 21.01 हेक्टेयर से अधिक होना चाहिये।
2. पुनर्वास स्थलों के रकबे में विसंगति होने के कारण 'लगभग' लिखा गया है।

इस तालिका के अनुसार पूर्वी तटबन्ध के पूर्व में भीम नगर, चांद पीपर उत्तर, चांद पीपर दक्षिण, डभारी, महुआ, नेमुआ रामपुर, कम्हरौली, मोहनपुर तथा महिषी टीलाभाग के नौ पुनर्वास स्थलों पर कोई भी स्थान खाली नहीं है यानी इन पुनर्वासों में वह सभी लोग आबाद होने चाहिये जिन्हें यहाँ पुनर्वासित किया गया है। ऐसा ही एक पुनर्वास स्थल है मोहनपुर। यह गाँव महिषी को नवट्टा से जोड़ने वाली सड़क (?) के दोनों ओर बसा है। तटबन्धों के अन्दर फंसने वाले गढ़िया कुन्दह रेवेन्यू मौजे के दो टोलों--फकिराही और परसबन्ना तथा रेवेन्यू मौजे मुहम्मदपुर के दो टोलों--मुहम्मदपुर और मिसिरौलिया को 40.20 एकड़ ज़मीन का अधिग्रहण कर के मोहनपुर गाँव में अलग-अलग पुराने नामों से ही पुनर्वास दिया गया था। तटबन्धों के निर्माण होने के साथ-साथ ही 1957 में इन टोलों में नदी ने कटाव करना शुरू कर दिया। दो-तीन साल तक तो इन गाँवों के लोग तटबन्धों के अन्दर ही इधर-उधर अपना अपना बिस्तर 'उठाते और बिछाते रहे' मगर 1960 के आस-पास इन लोगों को मजबूरन पुनर्वास में आना पड़ा। पुनर्वास में मिसिरौलिया की ज़मीन सबसे ऊपर थी सो वह लोग सबसे पहले आ कर बसे। परसबन्ना और फकिराही बीच में थे और सबसे सबसे निचली ज़मीन मुहम्मदपुर पुनर्वास की थी। यह भी एक इतिफ़ाक ही था कि मूल गाँव में मुहम्मदपुर की ज़मीन सबसे बाद में कटी और जब इन लोगों को अपना गाँव छोड़ कर भागना पड़ा तब उनकी पुनर्वास की ज़मीन पर कमर भर पानी था। इसलिए यह लोग पुनर्वास में न जा कर तटबन्ध पर ही बस गये और आज भी (2008) वहीं हैं।

ले-दे कर फकिराही, परसबन्ना और मिसिरौलिया के लोग ही पुनर्वास में हैं और वह भी आधे-अधूरे। फकिराही के हाफिज़ ऐनुल हक (70) बताते हैं कि, ''जिसका पूर्ण रूप से विनाश हो गया वही आदमी आपको पुनर्वास में मिलेगा। इस तटबन्ध की वज़ह से हम लोग दर-दर के भिखारी बन गये। हमारी तटबन्धों के अन्दर की ज़मीन या तो नदी में समा गई या उस पर बालू की मोटी परत पड़ी है। इस पुनर्वास में एक भी आदमी ऐसा नहीं होगा जिसके पास दस कट्ठा भी ज़मीन बची हो। यहाँ की हालत यह है कि यहाँ के सर्वे के नक्शे में यह पुनर्वास दिखाया गया है मगर उसमें हमारी ज़मीन कहाँ है इसका कोई ज़िक्र नहीं है। हमारे पास ज़मीन का कोई कागज़ भी नहीं हैं। जो जहाँ है, बस वहाँ है। सुपौल के पुनर्वास के रिकार्ड में ज़मीन का नाम खतियान में दर्ज़ है, बस उतना ही। उस हालत में यह पुनर्वास अस्थाई है और इसका दफ्तर तो अस्थाई है ही। हमारे गाँव के बहुत से लोग कहाँ चले गये वह हम नहीं जानते और इसी तरह कितने ही लोग बाहर से आकर इस ज़मीन पर बस गये, उसका भी कोई हिसाब-किताब नहीं है। इन सब के बावजूद हमारे गाँव का कोई भी आदमी ग़रीबी रेखा के नीचे नहीं है मगर ट्रैक्टर, मोटर साइकिल और दुमंजिले मकानों वाले लोग इस लिस्ट में मौजूद हैं।... केदली, जहाँ 1984

में तटबन्ध टूटा था, के एक बासुदेव मेहता थे जो कि पुनर्वास के मसले को सुप्रीम कोर्ट में ले जाने की बात करते थे। वकील भी ठीक कर लिया था मगर वकील का कहना था कि कोई 80,000 रुपये ख़र्च होंगे। अब हम लोग इतना पैसा कहाँ से लाते? यह बहुत साल पहले की बात है। अब तो मेहता जी को गुज़रे हुये कितना ज़माना बीत गया। फिर भी अगर आप कहते हैं कि पूरा मोहनपुर पुनर्वास आबाद है तो हम क्या कह सकते हैं?''

इसी तरह पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में 16 ऐसे पुनर्वास स्थल बताये गये हैं जहाँ कि पुनर्वास की ज़मीन खाली नहीं है। इन गाँवों (पुनर्वास स्थलों) के नाम धरहरा 'क' धरहरा 'ख', डगमारा, निर्मली लछमिनियाँ, इनरवा, डेवढ़, भखराइन, भेजा, रसियारी कल्याण, तेतरी पूर्व, तेतरी मध्य, भुबौल, अमाही खैसा, अमाही उत्तर, तरवाड़ा और ब्रह्मपुर हैं। हमने नमूने के तौर पर घोघरडीहा प्रखण्ड के इनरवा पुनर्वास तथा निर्मली प्रखण्ड के निर्मली-लछमिनियाँ पुनर्वास का एक जायज़ा लिया।

इनरवा में गाँव वाले बताते हैं कि इस गाँव में बसुआरी, हरड़ी और बसखोड़ा गाँव के पुनर्वास के लिए 2.79 हेक्टेयर (6.85 एकड़) ज़मीन ली गई थी-यह तो बताने वाला अब कोई शायद बचा नहीं है मगर कहते हैं कि इनरवा के मुनिलाल मुखिया, चुन्नीलाल यादव, मुनिलाल यादव, रामलखन यादव, बिलट यादव और डेवढ़ के तारणी सिंह देव की ज़मीन पुनर्वास के लिए अधिगृहित की गई थी। 1961-62 के आसपास तटबन्ध के अन्दर के गाँव वाले यहाँ बसने के लिए आये जिसमें ज़्यादातर लोग बसुआरी के थे। बसुआरी यहाँ से 4 किलोमीटर दूर पश्चिमी कोसी तटबन्ध और कोसी नदी के बीच फंसा हुआ था। इनरवा के ग्रामवासियों का मानना है कि बसुआरी गाँव वाले यहाँ आये जरूर और यहाँ घर भी बनाया मगर जल्दी ही वापस चले गये। यहाँ रहना उनके लिए मुमकिन भी नहीं था क्योंकि उनके खेत यहाँ से कम से कम 4 किलोमीटर दूर थे। इनरवा के सुखदेव यादव (62) बताते हैं कि उनके समेत चार लोग इनरवा पुनर्वास में बचे। सुखदेव यादव सरकारी कर्मचारी थे और तटबन्ध के अन्दर निघमा गाँव से सम्बद्ध थे तथा उनका पुनर्वास मुजौलिया टोल में मिला था जिसे उन्होंने अपने सम्पर्क से इनरवा में बदलवा लिया था और वहीं रह रहे हैं। उनके अलावा अपने ससुराल के सम्बन्ध से लक्ष्मी मुखिया को इनरवा में पुनर्वास मिला। दो अन्य लोग, हरड़ी के रसिक लाल यादव तथा सांघी के कवि पंडित का पुनर्वास भी बाद में प्रमाणित हुआ। बाकी लोग आये और गये। पुनर्वास की ज़मीन जब ख़ाली होने लगी तो गाँव के लोगों ने ही इस पर कब्ज़ा जमाना शुरू कर दिया। कुछ लोगों ने घर बना लिए तो कुछ लोगों ने खेती शुरू कर दी। जिसकी जैसी ताकत उसका वैसा ही दख़ल और यह कब्ज़ा हटाया नहीं जा सकता। कितनी बार निर्मली और सुपौल के पुनर्वास कार्यालय द्वारा दख़ल हटाये जाने की कोशिशें हुईं मगर कोई परिणाम नहीं निकला। जब तक पुनर्वास कार्यालय निर्मली में था तब तक खेती के लिए पुनर्वास की ज़मीन की बन्दोबस्ती होती

रही जो कि अब बन्द है। घोघरडीहा से इनरवा जाने वाले रास्ते पर इनरवा गाँव में घुसते ही बाईं तरफ एक विश्वकर्मा मन्दिर पड़ता है। इसी मन्दिर के सामने सड़क की दूसरी तरफ खाली ज़मीन पड़ी है जिस पर कभी इनरवा पुनर्वास हुआ करता था। इस ज़मीन पर सुविधा और सामर्थ्य के अनुसार अतिक्रमण की छूट है। फ़िलहाल इस ज़मीन पर बसुआरी का कोई भी आदमी नहीं रहता मगर जल-संसाधन विभाग द्वारा मानवाधिकार आयोग को दी गई सूचना के अनुसार इस पुनर्वास में कोई खाली ज़मीन नहीं है।

अब चलते हैं बसुआरी। यहाँ गाँव के बुर्जुग बताते हैं कि उन दिनों (1950 के दशक में) गाँव में तीन सौ-सवा तीन सौ परिवार रहे होंगे जोकि अब बढ़ते-बढ़ते 1600 के आस-पास हो गये हैं। जब तटबन्ध के कारण पुनर्वास की बात उठी तो बसुआरी के लगभग 300 परिवारों को पुनर्वास मिला बेलहा में और बाकी के 20-25 परिवारों को इनरवा में पुनर्वास दिया गया। दूरी अधिक होने के कारण इनरवा से तो सभी विस्थापित वहाँ जा कर तुरन्त ही वापस लौट आये मगर बेलहा पुनर्वास में अभी भी बसुआरी के 4 परिवार रहते हैं जिनके मुखिया के नाम नथुनी महतो, राम सेवक साव, फनिक लाल महतो और अनन्दा मंडल हैं। बसुआरी के ही जय कृष्ण यादव (58) का कहना है कि उनके पिता जी की पीढ़ी ने पुनर्वास में घर जरूर बनाया था मगर उसके अनुदान का सारा पैसा दलालों ने हड़प लिया था। जब किसी तरह की कोई सुविधा ही नहीं थी और पैसा भी नहीं मिला तब लोग रातों-रात अपना छप्पर-छानी उजाड़ कर पुनर्वास से वापस बसुआरी चले आए और इस तरह ''पुनर्वास तो उड़ गया हवा में''।

इसी से मिलती जुलती कहानी है निर्मली लछमिनियाँ पुनर्वास की जहाँ पूरा पुनर्वास आबाद बताया जाता है। यहाँ मनोहर पट्टी मौजा बड़हरा और पंचगछिया-दानों मरौना प्रखंड के गाँवों को पुनर्वास दिया गया था। बड़हरा यहाँ से 7 किलोमीटर की दूरी पर है इसलिए लोग आये और गये। यहाँ पुनर्वास की ज़मीन पर 1.26 हेक्टेयर (लगभग 3.15 एकड़) में निर्मली कॉलेज आबाद है और इस ज़मीन की रजिस्ट्री भी अब कॉलेज के नाम कर दी गई है और फिर भी कहा जाता है कि पुनर्वास खाली नहीं है। बाकी ज़मीन में कुछ लोग तो बड़हरा/पंचगछिया के अभी भी रहते हैं मगर अधिकांश पर, चाहे मान-मनौवल से हो या जबर दख़ल से, दूसरे-दूसरे लोगों का कब्ज़ा है। इसी गाँव में सहरसा जिला परिषद के भूतपूर्व अध्यक्ष भूषण गुप्ता के परिवार को भी पुनर्वास मिला था और उनके वारिसों में से कुछ लोग यहाँ अभी भी रहते हैं पर अधिकांश लोग अपने मूल गाँव को वापस चले गये हैं।

उधर सुपौल के पुनर्वास कार्यालय के अधिकारियों का (अनौपचारिक रूप से) मानना है कि पुनर्वास स्थल आबाद हैं और अगर कोई ज़मीन खाली भी है तो उसकी बन्दोबस्ती खेती के लिए वार्षिक तौर पर किसानों के लिए कर दी जाती है और इस तरह से पुनर्वास

ज़मीन का कोई भी हिस्सा खाली नहीं है। अनुलग्नक-1 में हम उन सभी गाँवों की प्रखण्डवार सूची दे रहे हैं जो कि तटबन्धों के अन्दर पड़ते हैं या जिन्हें तटबन्ध काटता है।

वास्तव में कोसी परियोजना में पुनर्वास का पूरा मसला बहुत ही पेंचदार हो गया है। किस गाँव में किन-किन गाँवों को पुनर्वास मिला, इसके बारे में कोई स्पष्टता नहीं है। पुनर्वास में जाने के बाद रोज़ी-रोटी की तलाश में जो लोग बाहर जाकर अपने गाँव वापस लौट आये उनके बारे में तो कुछ कहा भी जा सकता है मगर जो बाहर या दूसरी जगहों पर चले गये और लौट कर नहीं आये, उनके बारे में नाते-रिश्ते वाले भी नहीं जानते। पुनर्वास स्थलों में जो दूसरे लोग आ कर बस गये या जिन्होंने ने दूसरी जगह पुनर्वास ले लिया, उनके बारे में भी कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है। वैसी परिस्थिति में बिहार के जल-संसाधन विभाग को मानवाधिकार आयोग से यह कहना कि ''बरसात और बाढ़ के मौसम के बाद कृषि, मत्स्य-पालन और दूसरे आर्थिक क्रिया-कलाप बहुत आकर्षक हो जाते हैं'' वास्तव में तटबन्ध पीड़ितों के ज़ख़्मों पर नमक छिड़कने के अलावा दूसरा कुछ नहीं है।

एम. एम. प्रसाद (1956) ने कोसी तटबन्धों के बीच परिवारों की कुल संख्या 45,291 बताई थी (खण्ड-5) और बिहार राज्य का जल संसाधन विभाग (2001) में पुनर्वासित व्यक्तियों के परिवारों की संख्या केवल 39,527 बताता है जिसका मतलब है कि लगभ 6,000 परिवारों का पुनर्वास तो सरकार के ख़ुद के ही हिसाब से नहीं हुआ। इसके अलावा जब एम. एम. प्रसाद ने घरों की संख्या गिनाई थी उस समय कोसी के पूर्वी तटबन्ध की महिषी से कोपड़िया और पश्चिमी तटबन्ध की भंथी से घोंघेपुर तक के विस्तार की बात ही नहीं थी। जाहिर है महिषी से लेकर कोपड़िया तक के कोसी और पूर्वी कोसी तटबन्ध के बीच फँसे परिवार इस 45,291 की संख्या से अतिरिक्त हैं। यही बात भंथी से घोंघेपुर के बीच फँसे परिवारों पर भी लागू होती है। जब तक तटबन्धों के बीच फँसे परिवारों की सही संख्या का निर्धारण नहीं हो जाता तब तक यह कैसे पता लगेगा कि सरकार ने अपने दायित्व का निर्वाह किस हद तक किया या नहीं किया? इसके अलावा कोसी परियोजना का फ़ेज़ I जब 1985 में समाप्त हुआ था तब तक केवल निर्माण कार्यों पर 180 करोड़ रुपया ख़र्च हुआ था जब कि परियोजना का प्रारंभिक और अनुमोदित एस्टीमेट 37.31 करोड़ रुपयों का था अर्थात् फ़ेज़ I की समाप्ति पर मूल प्राक्कलन से करीब साढ़े चार गुना अधिक खर्च निर्माण कार्यों पर हुआ। जब चीज़ों के दाम इस कदर बढ़ रहे थे तब पुनर्वास की लागत में 2.12 करोड़ रुपयों के मुकाबले 2.27 करोड़ का ही ख़र्च कैसे हुआ। यह मूल्य वृद्धि पुनर्वास कार्यक्रमों में क्यों नहीं दिखाई पड़ती जबकि बहुत से गाँवों के पुनर्वास के लिए अभी तक ज़मीन का अधिग्रहण तक नहीं हुआ है। रमेश चन्द्र झा ने अपने बयान में इस तरह के बहुत से गाँवों के नाम गिनाये हैं।

बिहार सरकार के प्रतिवेदन को राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने वापस कोसी मुक्ति संघर्ष समिति को भेजा (13 मई 2004) और उस पर उनकी राय मांगी। जवाब में समिति ने अन्य बहुत सी बातों के साथ संविधान के मौलिक अधिकार के अनुच्छेद (कानून के समक्ष सब की समानता) की बात उठाई है। मसला बहुत ही साफ़ है, मेरा पड़ोसी मेरे घर के सामने की मेरी ज़मीन पर अपनी छत पर गिरने वाले बरसाती पानी को नहीं गिरा सकता तो फिर सरकार मेरे गाँव के ऊपर से कोसी जैसी 9 लाख क्यूसेक प्रवाह वाली नदी कैसे बहा देगी कि मेरे घर-बार सहित मेरी जीविका का स्रोत ही बह जाय? यह कहाँ का इन्साफ़ है? कोई भी सरकारी कर्मचारी क्यों मेरे गाँव को समाप्त (ख़त्म) गाँव कह कर सम्बोधित करेगा जहाँ कोई विकास का काम हो ही नहीं सकता? क्यों प्रखण्ड या चुनाव कार्यालय के नक्शों में तटबन्धों के भीतर के गाँवों पर पोचारा फेरा रहता है? क्यों हम किसी नेता या अधिकारी से यह नहीं कह सकते कि हमारे गाँव को सड़क से जोड़िये और यहाँ स्कूल या अस्पताल बनवा दीजिये? संविधान के सामने हमारी सबसे बराबरी का क्या हुआ? हम अपने पुरुषार्थ से कमाते खाते थे। हम को क्यों रिलीफ़खोर के ख़िताब से नवाज़ा गया?

ऐसा सुन कर लगता है कि तटबन्धों के बाहर रहने वाले यह सब मांग रख सकते हैं। यह बात अगर कोसी के पश्चिमी तटबन्ध और कमला के पूर्वी तटबन्ध के बीच के तथाकथित बाढ़ से सुरक्षित निचले क्षेत्र के लोगों से की जाय तो वह आप की नादानी पर तरस खायेंगे। इंजीनियरिंग के मूर्खता और शरारतपूर्ण उपयोग का अगर कोई करिश्मा देखना हो तो आंख बंद कर कमला-कोसी के बीच के क्षेत्र में चले आइये। इस क्षेत्र के बारे में जानकारी अन्यत्र उपलब्ध है।[32]

अब वह कोसी मुक्ति संघर्ष समिति हो या कोई भी ऐसा संगठन हो तो क्या करेगा? धरना, जलूस, प्रदर्शन, घेराव के साथ-साथ ज़्यादा से ज़्यादा चुनाव का बहिष्कार कर लेगा। वह भी 1999 में लोकसभा के चुनाव और 2000 के विधान सभा के चुनाव के समय कर के देखा जा चुका है। नेताओं को वोट चाहिये और वह इसके जवाब में अपनी आदत के अनुसार तसल्ली दे कर लोगों को बरगला कर चले गये।

राष्ट्रीय मानवधिकार आयोग ने कोसी मुक्ति संघर्ष समिति के आवेदन ख़ारिज यह कह कर दिया कि (पत्र संख्या 746/4/98-98 दिनांक 10/16 दिसम्बर 2005, देखें अनुलग्नक-2) कि ''कोसी मुक्ति संघर्ष समिति द्वारा प्रेषित मुद्दों को बिहार सरकार के पास भेज दिया जायेगा ताकि वह शिकायतकर्त्ता द्वारा बताये गये बिन्दुओं पर यथोचित आवश्यक कार्यवाही कर सके।'' आयोग इस फैसले पर बिना स्थल निरीक्षण के पहुँचा और उसने तटबन्ध पीड़ितों को बिहार सरकार के ही हवाले कर दिया जिसकी इस पूरे मसले पर अरुचि जग जाहिर है।

आशा की गई थी कि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग इस पूरे मसले पर लोकहित में

कोई निर्णय जरूर लेगा मगर ऐसा हुआ नहीं। कोसी पीड़ितों के पास न्यायालय का दरवाज़ा अभी भी खुला है मगर क्या वह अपना संघर्ष जारी रख पायेंगे और उसके बाद भी क्या उन्हें समुचित न्याय मिल पायेगा यह तो समय ही बतायेगा और अगर तब भी, भगवान न करे, उन्हें ऐसा ही फ़ैसला सुनने को मिले तब इसके बाद तटबन्ध पीड़ितों के पास माथा टेकने के लिए केवल एक ही चौखट बचती है और वह है सोसाइटी फॉर प्रिवेन्शन ऑफ क्रुएलिटी टू ऐनिमल्स (SPCA) यानी जानवरों के प्रति निर्दयता के विरुद्ध समिति, जिससे कहा जा सकता है कि वही कोई पहल करे। इस इलाके के लोग अपने आप को ऊँट या दरियाई घोड़े से तुलना करते हैं। तटबन्धों ने यहाँ के बाशिन्दों को जानवरों के बराबर ला खड़ा किया है, जब वह आदमी रहे ही नहीं तब उन्हें वहीं फ़रियाद करनी चाहिए जहाँ उनकी सुनवाई हो सके।

17. तटबंध पीड़ितों के सामने का विकल्प

आम जनता की बेहतरी सरकारों की इच्छा शक्ति पर निर्भर करती है। जिस तरह से सरकार ने कोसी परियोजना में विस्थापितों के पुनर्वास के प्रश्न को हल्का करके देखा, उसी का परिणाम है कि आज वहाँ के विस्थापित दर-दर की ठोकरें खा रहे हैं। उनकी यह कुर्बानी कुछ काम आई होती अगर कोसी योजना के बहु-प्रचारित लाभ किसी दूसरे को मिले होते। देश की लगभग सभी राजनैतिक पार्टियों ने किसी न किसी समय और किसी न किसी रूप में इस देश और प्रान्त पर शासन किया है मगर कभी किसी ने चुनाव का वक्त छोड़ कर कोसी तटबन्ध के बीच फंसे लोगों के बारे में आवाज नहीं उठाई। कोसी नदी पर बराहक्षेत्र बांध, कमला नदी पर शीसा पानी बांध और बागमती नदी पर नुनथर में बांध निर्माण की बात भी हवा में एक लम्बे समय से तैर रही है मगर कोई नहीं जानता कि यह बांध कब वजूद में आयेंगे।

जब भी इन बांधों के निर्माण की गंभीर चर्चा होगी तब और केवल तभी, सिर्फ एक बार, कोसी तटबन्ध पीड़ितों के जीवन में वह समय आयेगा जब वह अपने पुनर्वास, जैसा भी वह चाहते हों, की बात ज़ोर देकर कह पायेंगे कि इसकी लागत प्रस्तावित बांधों की लागत में शामिल की जाये। इस बात के लिए वह सरकार को तथा उन वित्तीय संस्थाओं को मजबूर कर सकते हैं कि अगर उनके वांछित पुर्नवास का काम बांध निर्माण के पहले नहीं किया जायेगा तो वह योजना का विरोध करेंगे। बराहक्षेत्र बांध का निर्माण पहले से बनी कोसी योजना के पीड़ितों के पुनर्वास की शर्त पर ही होना चाहिये।

यह तो तय है कि तटबंध पीड़ितों से पहले किये गये वायदे जैसे ज़मीन के बदले ज़मीन, घर के बदले घर, या परिवार पीछे एक व्यक्ति को नौकरी आदि सब झूठे थे। उन्हें पूरा करने की किसी की न तो नीयत थी और न यह संभव ही था। लोगों को फ़रेब खाना

था और वह झांसे में आ गये। लेकिन चन्द्र किशोर पाठक समिति द्वारा सुझाये गये प्रस्ताव अभी भी वैध हैं। सरकारी नौकरियों में सुझाये गये आरक्षण, जिस पर कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार की भी मुहर लगी हुई है, में तो कोई अतिरिक्त ख़र्च नहीं है जिसे लागू करने में किसी को कोई परेशानी नहीं होनी चाहिये।

डगमारा को भपटियाही से जोड़ते हुए कोसी नदी पर एक पुल का निर्माण शुरू हुआ है और वह एक अच्छा काम है और इस तरह के एक-आध पुल और बन जायें तो आवाजाही सुगम हो जायेगी और यहाँ के निवासियों का बाहरी दुनियाँ से सम्पर्क बढ़ेगा और बाज़ार की दुतरफा वृद्धि होगी। बिहार में गंडक नदी पर वाल्मीकिनगर के अलावा मोतिहारी, रेवा घाट और हाजीपुर में तीन स्थानों पर पुल बने हुये हैं अतः यह कोई नामुमकिन मांग नहीं है। एक बात इन पुलों में जरूर ध्यान देने योग्य है और वह यह कि इससे होकर पानी प्रवाह का रास्ता समुचित होना चाहिये वरना पुल के प्रतिप्रवाह तथा अनुप्रवाह में क्रमशः बालू जमाव और कटाव के कारण लोगों की परेशानियाँ बढ़ेंगी।

सिमराही प्रखंड राघोपुर, जिला सुपौल के सत्य नारायण प्रसाद बताते हैं '...मेरा गाँव भुलिया कोसी तटबन्धों के बीच था। गाँव के केवल कुछ लोगों को पुनर्वास मिला पिपरा में जहाँ लोग जाकर जल्दी ही वापस चले आए। अभी क़रीब सारे लोग वापस पुराने गाँव में हैं और वहीं नदी के थपेड़े झेलते हैं। गाँव का कटना और ज़मीन पर नदी का बालू पड़ना हमारी नियति है। पूरा गाँव कितनी बार इधर से उधर हुआ होगा अब उसका कोई हिसाब नहीं है। तटबन्धों के अन्दर की बात तो अब जाने ही दीजिये, बाहर वाले हमारे इलाके में कोसी का पूर्वी तटबन्ध है, गमहरिया उप-शाखा नहर है, सहरसा को बीरपुर से जोड़ने वाली सड़क है और सहरसा जोगबनी रेल-लाइन भी है। यह सब सुन कर लगता है कि हमारा इलाका बड़ा खुशहाल होगा। मगर, तटबन्ध और गमहरिया नहर के कारण यहाँ भीषण जल-जमाव रहता है, ज़मीन दलदल हो जाने जैसी है। केवल गरमा की फ़सल हो पाती है और नहर के बावजूद गरमा के मौसम में सिंचाई पम्प से होती है। कुछ इलाके जहाँ की जमीन ऊँची है, वहाँ रबी की खेती हो जाती है। उसमें भी इस नहर का कोई योगदान नहीं है। सड़क की हालत ऐसी है कि आप अगर बस में बैठ जाएं तो यहाँ से सहरसा के बीच बगल वाले से दस बार आप का सिर टकरायेगा और इतनी ही बार कम से कम सामने वाली सीट से आप को चोट लगेगी। ...अभी हमारे यहाँ डगमारा से भपटियाही को जोड़ते हुये एक पुल बनने वाला है। यहाँ दोनों तटबन्धों के बीच का फासला 8-9 किलोमीटर होगा और पुल में पानी

सत्य नारायण प्रसाद

के बहाव के लिए 2 किलोमीटर चौड़ा रास्ता देने की बात चल रही है। अब कहाँ 9 किलोमीटर में नदी का बहता पानी और कहाँ 2 किलोमीटर में पानी का बहाव? अब इस पुल के उत्तर में नदी की बाढ़ का लेवेल बढ़ेगा, ज़्यादा गाँव ज़्यादा समय के लिए पानी की चपेट में आयेंगे और पुल के दक्षिण में भीषण कटाव होगा। दोनों तरफ से लोग उजड़ेंगे। हम लोगों ने कितनी बार पुल की चौड़ाई बढ़ाने के लिए अधिकारियों से कहा, नेताओं से बात की मगर कौन सुनता है? पुल बनना और रास्ता मिलना अच्छी बात है मगर हम कितनी बार उजेंड़गें?"

स्थानीय लोगों को चाहिये कि वह तटबन्ध पीड़ितों के आर्थिक पुनर्वास, अतिरिक्त पुलों के निर्माण और तटबन्धों के बाहर जल-जमाव से मुक्ति पाने के लिए सरकार पर अभी से दबाव डालें और इन योजनाओं का क्रियान्वयन सुनिश्चित करें। अगर यह मौका लोगों ने गँवा दिया तो फिर कभी भी कोसी तटबन्ध पीड़ितों की बात कोई नहीं सुनेगा। अब यह लोगों पर निर्भर करेगा कि वह अपने हक़ की लड़ाई के लिए तैयार हैं या नहीं। एक बात और, अगर फिर एक बार राजनतिज्ञों के झांसे में आकर कोसी पीड़ितों ने ही बराहक्षेत्र बांध की बात उठाई और उन्हीं के मुँह में बांध के निर्माण के नारे ठूँस दिये गये तो यह लोग चुपचाप बनते बांध का नज़ारा देखेंगे और बदले में इन्हें कुछ भी नहीं मिलेगा। मांग और शर्त दोनों कभी एक साथ नहीं रखी जाती, यह बात समझ कर ही कोई कदम उठाना होगा।

तटबन्ध पीड़ितों के सामने एक और भी विकल्प खुला है और वह यह कि वह लोग ऐसे आदमियों को चुन कर जनतांत्रिक संस्थाओं में भेजें जो उनके हितों की आवाज़ अलग-अलग मंचों पर उठा सकें और पूरा करने के लिए संघर्ष कर सकें। यह अवसर हर पाँच साल बाद निश्चित रूप से आता है और यही एक दिन होता है जब जनता खुद अपना निर्णय लेती है। इस दिन के पहले और इस दिन के बाद वह अपनी ही चुनी हुई व्यवस्था के अधीन होकर जीती है। जनतंत्र द्वारा प्रदत्त इस अवसर को अगर धर्म, जाति, भाषा, समूह, झूठे नारों और प्रतिबद्धताओं के नाम पर खो दिया जाता है तो इसके लिए लोग खुद जिम्मेदार हैं। अगर लोग अपने संकुचित मानसिकता के दायरे से उठ कर ऊपर नहीं आते हैं तब तो वह जो भी परदा उठायेंगे उसी के पीछे उन्हें कातिल नज़र आयेंगे। इस स्तर की जागरूकता निश्चित ही बड़ी मुश्किल से पैदा होती है।

18. जिलों और प्रखण्डों की सीमा का पुनर्निर्धारण

अच्छे प्रशासन के लिए क्षेत्र में जिलों और प्रखण्डों का फिर से निर्धारण करना चाहिये। कोसी तटबन्धों के बीच जैसे स्थान को एक जिला बना देना चाहिये जिसका मुख्यालय तटबन्धों के ठीक बीचो-बीच सुपौल के आस-पास कहीं कर देना चाहिये। ऐसा होने पर ही प्रशासन को लोगों की तकलीफ़ों का एहसास होगा।

महिषी प्रखण्ड के जो गाँव कोसी के पश्चिमी तटबन्ध के पश्चिम में पड़ते हैं उनके महिषी में होने की कोई तुक ही नहीं है। यही स्थिति झंझारपुर के दक्षिण बहुत से गाँवों की है जिनका सारा काम-काज दरभंगा से चलता है, मधुबनी से नहीं। यह गाँव क्यों मधुबनी में बने रहें ? मरौना प्रखण्ड कार्यालय का बेलही से संचालन का क्या मतलब निकलता है ? इन आवश्यक बातों पर कोई चर्चा नहीं होती है न कोई संगठित मांग ही उठती है। यह काम प्राथमिकता के स्तर पर होना चाहिये।

अनुलग्नक-1

कोसी तटबन्धों के बीच और उनके द्वारा विभाजित गाँवों की जिला/प्रखंडवार सूची

जिला सहरसा

नवहट्टा प्रखण्ड -

1. देवका
2. हाटी
3. कठुआर अराजी
4. बरियारी
5. नवहट्टा
6. रामपुर
7. परताहा
8. बकुनियाँ
9. बरहारा
10. महुआ
11. छतवन
12. मझौल
13. शाहपुर
14. गोविन्दपुर
15. डरहार
16. भेलाही
17. गढ़िया लोहार
18. भकुआ
19. मोहम्मदपुर
20. कुम्हरौली
21. मोहनपुर
22. एनायतपुर
23. चन्द्रायन
24. एकाढ़
25. रसूलपुर
26. नौला
27. बिरजाइन
28. नरगा
29. नरायणपुर
30. लालपुर
31. सतौर
32. मुरली
33. गढ़िया
34. धर्मपुर
35. केदलीपट्टी
36. त्रिखुट्टी
37. बराही
38. पुरुषोत्तमपुर
39. पहाड़पुर
40. असनाही पट्टी
41. कैथवार
42. कटियाही
43. ब्रह्मपुर

महिषी प्रखण्ड -

1. कुड़गाँव
2. भेलाही कलाँ खुर्द
3. बीरगाँव
4. अमाही
5. तरही
6. सहरवा
7. समानी
8. भन्थी
9. नवादा
10. डुमरी
11. सुपौल
12. धपारी
13. तेलवा
14. थनवार
15. प्राणपुर
16. सेमर
17. नोनिया
18. महिसरहो
19. परेवा
20. ऐना सोहागपुर
21. ऐना
22. मंगरौनी
23. करहारा
24. घोंघेपुर
25. झारा
26. सिसौना
27. बिहना

28. रखटी
29. धर्मपुर
30. धनौज
31. राझनपुर
32. बिरवार
33. सिरवार
34. मैंना
35. बघौड़-1
36. बघौड़-2
37. बलिया
38. कुन्दह
39. आरापट्टी
40. अंगसिर
41. बघवा हाट आबाद
42. चतरिया
43. धमवारा
44. गन्डौल
45. महिषी
46. तेघरा
47. मैंना आराजी
48. बघौड़-3
49. सरौनी
50. सरौनी खुर्द
51. पचभिन्डा

सिमरी बख्तियारपुर प्रखण्ड -

1. घोघसम
2. सुखासन
3. कठडूमर
4. आगर
5. बेलवारा
6. धनुपरा
7. पहाड़पुर
8. तिलाठी

प्रखण्ड सलखुआ-

1. कबिरा
2. सहुरी
3. चिरैया
4. भिरखी
5. खजुरबन्ना
6. सौथी
7. कबीरपुर
8. बलदेही
9. ताजपुर
10. रैगिनियाँ
11. अलानी
12. सहुरिया
13. बसाही
14. शाहगाँव
15. गोरदह
16. कमड़ा
17. गौरी
18. भेलवा
19. सितुआहा
20. उटेसरा
21. कोतवलिया
22. छछुआ
23. साम्हर खुर्द
24. साम्हर कलाँ
25. कचौत
26. चानन
27. खोचरदेवा
28. कठघारा
29. मटिहानी
30. सेवती
31. मुरला
32. मियाँ जागीर
33. सलखुआ
34. बनगावाँ

जिला सुपौल

बसंतपुर प्रखण्ड

1. भीमनगर
2. दुबियाही
3. मधुरा
4. रानीगंज
5. डुमरी मिलिक
6. पिपराही पट्टी
7. ढाढ़ा
8. छितौनी
9. ढाढ़ा पट्टी अजरक्बे चौदीप-23/1
10. ढाढ़ा पट्टी अजरक्बे चौदीप-23/2
11. ढाढ़ा पट्टी अजरक्बे छितौनी-24
12. ढाढ़ा पट्टी अजरक्बे छितौनी-24/1
13. ढाढ़ा पट्टी अजरक्बे चिलौनी-23
14. ढाढ़ा पट्टी-22
15. बहादुरगंज
16. सरनपुर
17. परसाही-1
18. परसाही-2
19. परसाही-3
20. नरपत पट्टी
21. भटनियाँ/सातन पट्टी
22. पिपराही गोठ
23. साहेबानं
24. लक्ष्मीपुर
25. पंचपंडरिया
26. भगवानपुर

निर्मली/भपटियाही प्रखण्ड -

1. कुनौली
2. कमलपुर
3. डगमारा
4. बथनाहा
5. बिलन्दी
6. धरहरा
7. बनैनियाँ
8. रुपौली
9. सिमरी

10. सिकरहट्टा
11. दुधैला
12. दिघिया
13. वेला
14. मौरा
15. रेहड़िया
16. थरिया
17. मझारी
18. झहुरा
19. लगुनियाँ
20. महुआ
21. हरियाही
22. जरौली
23. हरपुर
24. लौकाहा
25. बहुअरवा
26. उगरी पट्टी
27. सियानी
28. करहारा
29. कबियाही
30. तकिया
31. बजदारी चकला
32. गोपालपुर
33. बैसा
34. कल्याणपुर
35. गिधनी
36. भुलिया
37 कटैया भुलिया
38. वलथरवा
39. ढाढ़ी
40. निर्मली (केवल एक टोला)

किशनपुर प्रखण्ड -

1. कलिमुगरा
2. दिनाजपुर
3. लछमिनियाँ
4. खखई
5. शिवपुरी
6. थरबिट्टिया
7. नौआबाखर
8. कमलदाहा
9. आर्राहा
10. गदहवा
11. सोनबरसा
12. परसा माधो
13. आसनपुर कुपहा
14. बौराहा
15. सुजानपुर
16. मौजाहा
17. सिसवा
18. बेगमगंज
19. पंचगछिया
20. सुकुमारपुर
21. दुबियाही
22. दिघिया
23. बेला
24. अभुआर
25. किशनपुर
26. चाँदपीपर
27. कुलीपट्टी
28. सरायगढ़
29. इटहरी
30. सनपतहा
31. औराही
32. बनैनियाँ

सुपौल प्रखण्ड -

1. सुकैला
2. बेला परसौनी
3. निर्मली
4. सुरती पट्टी
5. डभारी
6. घीवक
7. घूरन
8. मुगरार
9. डुमरिया
10. फकिरना
11. कर्णपट्टी
12. बलवा
13. नरहिया
14. पिपराखुर्द
15. बैरिया
16. बसबिट्टी
17. गोपालपुर सीरे
18. गोपालपुर खुर्द
19. चन्दैल
20. मरिचा
21. परसौनी
22. रामपुर
23. नेमुआ
24. बिजलपुर
25. बकौर
26. तेलवा
27. पिपराहरि

मरौना प्रखण्ड -

1. सिसौनी
2. रसुआर
3. धाबघाट
4. कदमाहा
5. गोतराही
6. कटैया
7. ललमनिया
8. बेलही
9. महेशपुर
10. गमहरिया
11. पड़री
12. महुआही
13. कुल्हड़िया
14. सरोजा बेला
15. कोनी इनामत

16. पंचगछिया
17. मनोहर पट्टी
18. बड़हारा
19.जोबहा
20. घोगकरिया
21. परिकोच
22. बसखोड़हा
23. हड़री
24. बदुराही
25. पचलेहरा
26. खोरमन
27. चन्दरगढ़
28. कमरैल
29. मरौना
30. कुसमौल
31. जनार्दनपुर
32. रतहो
33. गनौरा
34. परसौनी
35. मुंगरीहाल
36. खोखनाहा
37. कुरावँ-बेचिरागी

लौकही प्रखण्ड -

1. नरेन्द्रपुर
2. महादेव मठ
3. गिदराही
4. महथौर गोठ
5. महथौर
6. धनछेया
7. हरद्वार लौकहा
8. कौड़िहर लौकही
9. बरुआर
10. राजाराम पट्टी
11. नरही
12. बनगावाँ

घोघरडीहा प्रखण्ड-

1. बसुआरी
2. पिपरा कमलपुर
3. अलौला
4. हड़री
5. मैंनाही
6. बनरझूला
7. अमाही
8. देवनाथ पट्टी
9. सरौती
10. निघमा
11. नौवा बाखर
12. धनपत बरही
13. हटनी
14. रजुआही
15. सहरवा
16. धाबघाट
17. घोघरडीहा
18. किशुनी पट्टी
19. डेवढ़

मधेपुर प्रखण्ड -

1. कालिकापुर
2. मटरस
3. बिशुनपुर
4. पौनी
5. रतुआर
6. लुचबानी
7. नवादा
8. टेंगरी
9. रुपौली
10. तरडीहा
11. चुन्नी
12. नरही जगन्नाथपुर
13. करहारा
14. द्वालख
15. खरीक
16. भेजा
17. परसौनी
18. बलथी
19. बकुवा
20. भरगावाँ
21. मैनीमहपतिया
22. लिलजा
23. परसौनी
24. महपतिया
25. छतौनी
26. मेहशा
27. भवानीपुर
28. बगेवा
29. रामपुर
30. मैंनाही
31. परिआही
32. गोबरगढ़ा
33. असुरगढ़
34. गढ़गाँव
35. बसीपट्टी
36. गोआही
37. भगता
38. डारह
39. बेला
40. हरसंकरी
41. खजुरी
42. टेंगराहा

जिला दरभंगा

किरतपुर प्रखण्ड-

1. रसियारी
2. झगरुआ
3. तड़वारा
4. जमालपुर
5. नरकटिया
6. भुबौल
7. भण्डरिया
8. कंदवारा
9. बिरदीपुर

अनुलग्नक-2

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग

(विधि विभाग)

सरदार पटेल भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली-110 001

केस सं० : 746/4/98-99 दिनांक 10-16/12/2004

प्रति,

श्री देव कुमार सिंह
कोसी मुक्ति संघर्ष समिति
जिला - सुपौल (बिहार)

महोदय/महोदया,

आपकी दिनांक की बाबत निर्देशानुसार मुझे कहना है कि इस विषय पर आयोग में 7/12/2004 को विचार किया गया। तदनुसार आयोग ने निम्नलिखित निर्देश जारी किये हैं,

कोसी मुक्ति संघर्ष समिति, सुपौल, बिहार द्वारा प्रेषित एक शिकायत आयोग को प्राप्त हुई थी जिसमें आरोप लगाया गया था कि कोसी नदी पर तटबन्धों के निर्माण के कारण दोनों तटबन्धों के बीच के क्षेत्र में रहने वाले बाशिन्दों को तकलीफ है क्योंकि उनकी ज़मीन पानी में डूब गई है। इस शिकायत पत्र में आयोग से हस्तक्षेप तथा न्याय की गुहार लगाई गई है।

आयोग ने इसका संज्ञान लिया और 12.2.1999 की कार्यवाही के आधार पर मुख्य सचिव, बिहार सरकार को चार सप्ताहों के अन्दर इस विषय पर एक रिपोर्ट भेजने का निर्देश दिया।

बिहार सरकार द्वारा दिनांक 11.10.2001 को प्रेषित एक रिपोर्ट आयोग को प्राप्त हुई जिसमें कहा गया है कि सरकार ने दोनों तटबन्धों के बीच के क्षेत्र में रहने वाले लोगों के पुनर्वास के लिए ज़मीन का प्रावधान किया है। ग्रामीणों के पुनर्वास के लिए सरकार द्वारा 2.12 करोड़ रुपयों की स्वीकृति दी गई थी।

इस रिपोर्ट पर आयोग ने 25.2.2002 को अपनी कार्यवाही में विचार किया और बिहार सरकार को फिर निर्देश दिया कि वह विस्थापित व्यक्तियों के पुनर्वास की प्रगति पर एक रिपोर्ट आयोग को भेजे और इसके साथ-साथ पुनर्वास प्रक्रिया पूरी करने की योजना भी आयोग को बताये।

बिहार सरकार की तरफ से 1.11.2002 को प्रेषित एक रिपोर्ट आयोग को प्राप्त हुई जिसमें कहा गया है कि सरकार ने जहाँ तक संभव हो सका है दोनों तटबन्धों के बीच रह रहे लोगों की कठिनाइयों को हल करने का प्रयास किया है। सरकार द्वारा इस दिशा में किये गये काम नीचे दिये गये हैं,

1. प्रत्येक विस्थापित परिवार को उसके मूल घर के बराबर ज़मीन तटबन्धों के बाहर उपलब्ध करवाई गई है ,और इस बात का ध्यान रखा गया है कि वह लोग जहाँ तक संभव हो सके अपने खेतों के नज़दीक रह सकें।

2. सड़कों, विद्यालयों, तालाबों, कुओं तथा सामुदायिक भवन के निर्माण के लिए कुल वासगीत की ज़मीन के 40 प्रतिशत क्षेत्र की अतिरिक्त व्यवस्था सार्वजनिक उपयोग के लिए की गई है। इन सभी सार्वजनिक सुविधाओं की व्यवस्था करने का पूरा खर्च सरकार ने वहन किया है। इसके अलावा जहाँ भी जरूरी है सरकार ने अपने ख़र्च पर नावों की व्यवस्था की है।

3. विस्थापितों के तटबन्धों के अन्दर के मकान की मालियत के बराबर बिना किसी डेप्रिसिएशन की कटौती लागू करके प्रत्येक परिवार को गृह निर्माण के लिए अनुदान दिया गया है। इसके साथ ही विस्थापितों के तटबन्धों के अन्दर वाले घरों को उनके लिए छोड़ दिया गया है ताकि वह उनका उपयोग अपनी खेती आदि कार्यों के लिए कर सकें।

4. विस्थापितों के सामने यह विकल्प खुला था कि वह आधिकारिक पुनर्वास स्थलों से दूर अपनी ज़मीन पर अपना घर बना सकें लेकिन ऐसी परिस्थिति में उन्हें न तो ज़मीन की कोई कीमत दी गई और न ही ऐसी जगह सरकार की तरफ़ से कोई सार्वजनिक सुविधा प्रदान की गई। अलबत्ता मामूल के मुताबिक उन्हें गृह निर्माण का अनुदान दिया गया।

5. यह बात बड़ी दिलचस्प है कि 1968 की बाढ़ में कोसी नदी में 9 लाख क्यूसेक से ज़्यादा का प्रवाह आया जो कि पिछली कई दशाब्दियों में सबसे ज़्यादा था। इसके बावजूद तटबन्धों के बीच रहने वाले लोगों को अपने पुराने घरों में रहने में किसी विशेष तकलीफ़ का सामना नहीं करना पड़ा। वास्तव में ऐसे बहुत से परिवार हैं जिनका तटबन्धों के बाहर पुनर्वास किया गया था और उन्होंने गृह निर्माण की आख़िरी किस्त भी ले ली थी और वह तटबन्धों के बीच के अपने पुराने घरों को लौट आये। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जहाँ एक ओर सरकार ने ऐसे लोगों के पुनर्वास की कहीं बेहतर सुरक्षित जगह पर व्यवस्था की थी फिर भी इनमें से बहुत से लोग किसी न किसी कारणवश अपने पुराने घरों में ही रह रहे हैं।

इस रिपोर्ट की मुख्य बातें शिकायतकर्त्ता के पास उसके मन्तव्य, अगर कोई हो, के लिए आयोग की 6.5.2004 की कार्यवाही के बाद भेजी गई।

शिकायतकर्त्ता, कोसी मुक्ति संघर्ष समिति, ने अपने 14.6.2004 के प्रतिवेदन में सरकार को बताया कि,

1. बिहार सरकार ने कोसी तटबन्धों के विस्थापितों के पुनर्वास के लिए बहुत सी योजनाएं बनाईं मगर उनमें से किसी पर अमल नहीं हुआ। विस्थापितों के समक्ष

जीविकोपार्जन का प्रश्न उठ खड़ा हुआ है और उनके पास पंजाब या वैसी जगहों पर पलायन के अलावा कोई रास्ता नहीं बचा है।

2. विना किसी आर्थिक पैकेज के पुनर्वास की समस्या का स्थानीय समाधान मुमकिन नहीं है। बहुत से विस्थापितों को अभी तक ज़मीन नहीं मिली है। जिन लोगों को यह ज़मीन मिली भी है उनको खेती कर पाना संभव नहीं है क्योंकि या तो यह ज़मीन बंजर है या अन्य कारणों से जोतने लायक नहीं है। दोनों तटबन्धों के बीच सुपौल, दरभंगा और मधुबनी के बीच के बहुत से गाँवों में आंशिक रूप से पानी भरा हुआ है और वहाँ के ग्रामवासियों को इसका कोई मुआवजा नहीं मिला है।

3. सरकार का यह कहना कि प्रभावित क्षेत्र में उद्योग और मत्स्य पालन का विकास किया जा रहा है, ग़लत है। दोनों तटबन्धों के बीच मत्स्य पालन संभव ही नहीं है। बिहार सरकार द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट अतिरंजित और भ्रामक है। इस इलाके के लोग एक निहायत घटिया दरजे की जिन्दगी जी रहे हैं।

4. सरकार द्वारा इस इलाके में स्वास्थ्य सेवाओं की कोई भी व्यवस्था नहीं की गई है। वहाँ कोई सरकारी अस्पताल नहीं है। स्थानीय लोग कई प्रकार की बीमारियों से संक्रमित हैं।

कोसी मुक्ति संघर्ज़ समिति द्वारा प्रेज़ित मुद्दों को बिहार सरकार के पास भेज दिया जायेगा ताकि वह शिकायतकर्त्ता द्वारा बताये गये बिन्दुओं पर यथोचित आवश्यक कार्यवाही कर सके। इन सारी बातों का ध्यान रखते हुये इस मामले का निस्तारण किया जाता है।

आपकी सूचनार्थ प्रेषित।

आपका विश्वासी

सहायक निबन्धन अधिकारी (विधि)

सन्दर्भ

1. Khosla, A. N; Presidential Address At The Annual Meeting Of CBIP - 1st December 1947,Annual Repoprt (Technical), Part-1, CBIP Publication No: 40,p-10.
2. Sain, Kanwar And Rao, Dr K. L.; Report on Recent River Valley Projects In China, 1955, pp-133-134.
3. सिंह, टी॰ पी॰; आर्यावर्त-पटना, कोसी योजना के बांध, 26 जनवरी 1955, पृ॰
4. झा, मही नारायण, आर्यावर्त-पटना में उद्धृत, 17 जनवरी 1955.
5. आर्यावर्त-पटना, 4 मार्च 1956, पृ॰ 2.
6. आर्यावर्त-पटना, 14 जून 1956, पृ॰ 6.
7. आर्यावर्त-पटना, 12 जून 1956, पृ॰ 1.
8. सिंह, जानकी नन्दन: बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, राज्य में बाढ़ और सूखा से उत्पन्न स्थिति, 11 सितम्बर 1956, पृ॰ 46.

9. Azad, Braj Nandan Prasad; *People Within The Kosi Embankments*, The Indian Nation, 7th July 1956 pp-4.
10. ibid
11. Prasad, M.M.; *Rehabilitation of Embanked People*-The Indian Nation. 8thJuly, 1956, pp-4.
12. Prasad, M.M., *BiharAssembly Debates*, 13th. September 1956, p-42.
13. प्रसाद, एम॰ एम॰; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 13 सितम्बर 1956, पृ॰ 42.
14. चौधरी, लहटन, कामता प्रसाद गुप्ता, भोला सरदार तथा खूब लाल महतो द्वारा सम्पादक आर्यावर्त पटना को लिया गया पत्र, 11 सितम्बर 1956, पृ॰ 3.
15. चौधरी, लहटन; तटबन्ध के बीच पड़ने वालों की जिम्मेवारी सरकार ले, आर्यावर्त पटना, 21 अप्रैल 1957, पृ॰ 2.
16. Mookerjea, Debesh; Chief Engineer-Kosi Project, *Rehabilitation in the Kosi*, pp 101, Indian Journal of PowerAnd River Valley Development, Kosi Project Number, 1963.
17. Singh, T.P.; Memorandum for the Council of Ministers उपर्युक्त।
18. बिहार विधान सभा वाद-वृत्त; 7 अप्रैल 1958, पृ॰ 46-47.
19. Debesh Mookerjea, op. cit., p-102.
20. मेहता वैद्यनाथ, बिहार विधान सभा वाद-वृत्त; 20 सितम्बर 1966, पृ॰ 22-23.
21. कुँवर परमेश्वर; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 7 जून 1968, पृ॰ 25.
22. बिहार विधान सभा, लोक लेखा समिति की 45वीं रिपोर्ट, 8 जून 1972 को प्रस्तुत, पृ॰ 53-58.
23. बिहार विधान सभा, प्राक्कलन समिति की 50वीं रिपोर्ट (1972-73), पृ॰ 12-13.
24. The Searchlight, Patna, December 16th, 1954, pp-1
25. आर्यावर्त-पटना, 9 नवम्बर 1986.
26. मेहता, वैद्यनाथ; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, 21 मार्च 1986, पृ॰ 14.
27. चौधरी, लहटन; कुछ अपनी बातें, 1986, पृ॰ 86-87.
28. कोसी पीड़ित विकास प्राधिकार के प्रस्तावित कार्यक्रम, सूचना तथा जनसंपर्क विभाग बिहार सरकार (1987)
29. मेहता, बैद्यनाथ; बिहार विधान सभा वाद-वृत्त, पृ॰ 10.
30. सिंह, रामेश्वर प्रसाद; बिहार विधान सभा वाद वृत्त, 28 मार्च, 1968.
31. Reply on the complaint from Shri Deo Kumar Singh, President of Kosi Mukti Sangharsha Samiti, Supaul, Bihar; Govt. of Bihar, Dept. of Water Resources, Letter No. 1813, deted 6th Sept. 2001.
32. मिश्र, दिनेश कुमार; बग़ावत पर मजबूर मिथिला की कमला नदी (2006), घोघरडीहा प्रखंड विकास स्वराज्य संघ, मधुबनी।

-- x --

लोक विज्ञान संस्थान

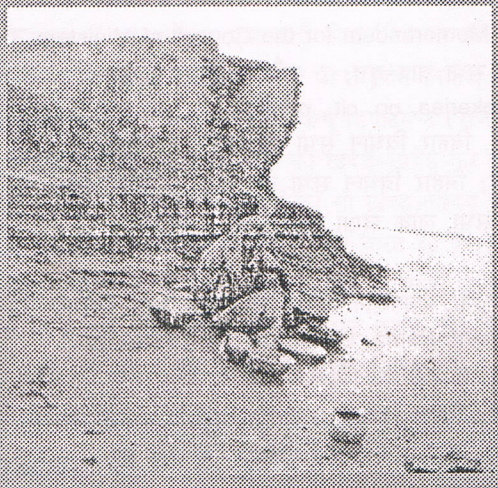

(People's Science Institute, Dehradoon)

252, वसन्त विहार फ़ेज़-1

देहरादून-248006 (उत्तरांचल)

फोन : 0135-2773849/2763649

ई० मेल : psiddoon@gmail.com

www.peoplesscienceinstitute.com

लेखक द्वारा लिखी गई अन्य पुस्तकें

क्र० सं०	पुस्तक का नाम	प्रकाशन वर्ष
1.	बाढ़ से त्रस्त-सिंचाई से पस्त (उत्तर बिहार की व्यथा-कथा) - समता प्रकाशन, पटना	1990
2.	कोसी-उम्र क़ैद से सज़ा-ए-मौत तक - बाढ़ मुक्ति अभियान	1992
3.	बाढ़ मुक्ति अभियान प्रथम प्रतिनिधि सम्मेलन रिपोर्ट	1992
4.	बन्दिनी महानन्दा - समता प्रकाशन, पटना	1994
5.	ऐसे आती है बाढ़ - बाढ़ मुक्ति अभियान	1996
6.	गंडक क्षेत्र और जल-जमाव का घाव - बाढ़ मुक्ति अभियान	1996
7.	बाढ़ मुक्ति अभियान द्वितीय प्रतिनिधि (निर्मली) सम्मेलन-रिपोर्ट	1997
8.	दक्षिणी-एशिया नदी संकट संगोष्ठी सम्मेलन-रिपोर्ट	1998
9.	बाढ़ मुक्ति अभियान तृतीय प्रतिनिधि सम्मेलन-रिपोर्ट	2000
10.	बोया पेड़ बबूल का (बाढ़ नियंत्रण का रहस्य) - पृथ्वी प्रकाशन, नई दिल्ली	2000
11.	विश्व बांध आयोग पर सम्मेलन की रिपोर्ट, राँची - बाढ़ मुक्ति अभियान	2001
12.	महानन्दा के गले का फन्दा - महानन्दा तटबन्ध विरोधी संघर्ष समिति, कटिहार	2003
13.	बाढ़ तो फिर भी आयेगी - बाढ़ मुक्ति अभियान	2003
14.	बराह क्षेत्र बांध की वस्तुस्थिति - बाढ़ मुक्ति अभियान	2004
15.	भुतही नदी और तकनीकी झाड़-फूंक - बाढ़ मुक्ति अभियान	2004
16.	बग़ावत पर मजबूर मिथिला की कमला नदी - बाढ़ मुक्ति अभियान	2006
17.	कोसी नदी की कहानी - दुइ पाटन के बीच में... - लोक विज्ञान संस्थान, देहरादून	2006

कोसी नदी पर बने तटबन्धों के कारण सुपौल, सहरसा, मधुबनी और दरभंगा के 13 प्रखण्डों के 380 गाँवों की लगभग दस लाख आबादी (2001) तटबन्धों के बीच फंस गई । इन कम-किस्मत लोगों के पुनर्वास की चर्चा परियोजना के मूल स्वरूप में थी ही नहीं । योजना पर काम में हाथ तो 1955 में लगा था जब इनकी आबादी मात्र 1,92,000 थी मगर पुनर्वास पर खुल कर बोलना 1956 में शुरू हुआ । यह लोग तब से आदिम परिस्थितियों में जिन्दगी गुजार रहे हैं जिन पर देखे बिना विश्वास नहीं किया जा सकता। तटबन्धों के बीच बसने वाले लोगों के ऊपर से कोसी जैसी नदी का पानी हर साल बह जाया करता है । योजना जनित विस्थापन और पुनर्वास पर जब भी कोई बात कही जाती है तो उसमें बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र हमेशा छूट जाया करता है । ऐसी परिस्थितियों में जिये जाना वाकई एक कमाल है मगर यह वही लोग हैं जिन्होंने समाज के व्यापक हितों के लिए अपने हितों की कुरबानी दे दी और बाद में समाज और सत्ता की अवहेलना के शिकार हो गये । क्या इन तटबन्ध पीड़ितों की तकलीफों पर कभी कोई चिन्ता व्यक्त की जायेगी? यह पुस्तिका कोसी परियोजना में पुनर्वास की कही-अनकही बातों का संकलन है और अब इस मसले पर कौन-कौन से दरवाजे अभी भी खुले हैं उनकी संभावनाओं पर नजर डालती है । बाढ़ मुक्ति अभियान इस विषय पर बहस, उत्तरदायित्व और कार्यवाही की आशा करता है ।

बाढ़ मुक्ति अभियान
Freedom From Floods Campaign

बाढ़ मुक्ति अभियान

रोड नं० 6बी, राजीव नगर,
पटना - 800 024 (बिहार)
मो० : 9431303360 / 9431074437
ई-मेल : dkmishra108@gmail.com